|| श्रीः ||

# चाणक्यनीतिदर्पण

## भाषा टीका सहित

जिसमें

नीति के अत्युत्तम दृष्टान्त युक्त सामयिक
श्लोक वर्णित हैं

जिसको


**बाबू दीपचन्द मैनेजर ने**
**निज प्रबन्ध से**

मुलतानमल्ल प्रिंटिंग प्रेस
छा० नीमच में
छापकर प्रकाशित किया

विक्रम सम्वत १९५७

# * चाणाक्यनीतिदर्पणः *
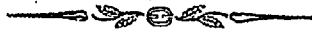
## * प्रथमोऽध्यायः १ *

* श्रीगणेशाय नमः *

प्रणम्य शिरसा विष्णुं त्रैलोक्याधिपतिं प्रभुम् ॥
नानाशास्त्रोद्धृतं वक्ष्ये राजनीतिसमुच्चयम् ॥ १ ॥

टीका—तीनों लोकोंके पालन करनेवाले सर्वशक्तिमान् विष्णुको शिरसे प्रणाम करके अनेक शास्त्रोंमेंसे निकालकर राजनीति समुच्चय नामक ग्रंथको कहताहूं ॥ १ ॥

अधीत्येदं यथाशास्त्रंनरोजानातिसत्तमः ॥
धर्मोपदेशविख्यातंकार्याकार्यंशुभाशुभम् ॥२॥

टीका—जो इसको विधिवत् पढकर धर्मशास्त्रमें प्रसिद्ध शुभकार्य और अशुभकार्यको जानता है वह अति उत्तम गिना जाता है ॥ २ ॥

तदहंसंप्रवक्ष्यामिलोकानांहितकाम्यया ॥
येन विज्ञानमात्रेणसर्वज्ञत्वंप्रपद्यते ॥ ३ ॥

टीका-मैं लोगोंके हितकी वांछासे उसको कहूंगा जिसके ज्ञानमात्रसे सर्वज्ञता प्राप्त हो जाती है ॥३॥

मुर्खशिष्योपदेशेनदुष्टस्त्रीभरणेनच ॥
दुःखितैःसंप्रयोगेणपंडितोप्यवसीदति ॥ ४ ॥

टीका-निर्बुद्धिशिष्यको पढानेसे, दुष्टस्त्रीके पोषन से और दुःखियोंकेसाथ व्यवहार करनेसे पंडितभी दुःख पाता है ॥ ४ ॥

दुष्टाभार्याशठंमित्रंभृत्यश्चोत्तरदायकः ॥
ससर्पेचगृहेवासोमृत्युरेवनसंशयः ॥ ५ ॥

टीका-दुष्टस्त्री, मूर्खमित्र, उत्तरदेनेवाला दास, और साँपवाले घरमें वास, ये मृत्युस्वरूपही हैं इस में संशय नहीं ॥ ५ ॥

आपदर्थेधनंरक्षेद्दारान्रक्षेद्धनैरपि ॥
आत्मानंसततंरक्षेद्दारैरपिधनैरपि ॥ ६ ॥

टीका-आपत्ति निवारण करनेके लिये धनको बचाना चाहिये, धनसेभी स्त्रीकी रक्षा करनी चाहिये सबकालमें स्त्री और धनोंसेभी अपनी रक्षाकरनी उचित है ॥ ६ ॥

आपदर्थेधनंरक्षेच्छ्रीमतश्चाकिमापदः ॥
कदाचिच्चलितालक्ष्मीःसंचितापिविनश्यति॥७॥

टीका—विपत्तिनिवारणकेलिये धनकी रक्षाकरनी उचित है क्यों कि श्रीमानोंकोभी आपत्ति आती है. हाँ कदाचित् दैवयोग और चंचलहोनेसे संचित लक्ष्मी भी नष्ट होजाती है ॥ ७ ॥

यस्मिन्देशेनसंमानोनवृत्तिर्नचबांधवः ॥
नचविद्यागमोप्यस्तिवासंतत्रनकारयेत् ॥८॥

टीका—जिस देशमें न आदर, न जीविका, न बन्धु, न विद्याका लाभ है वहां वास नहीं करना चाहिये॥८॥

धनिकःश्रोत्रियोराजानदीवैद्यस्तुपंचमः ॥
पंचयत्रनविद्यंतेनतत्रदिवसंवसेत् ॥ ९ ॥

टीका—धनिक, वेदकाज्ञाता—ब्राह्मण, राजा, नदी, और पांचवां वैद्य ये पांच जहां विद्यमान नर नहीं हैं तहां एकदिनभी वास नहीं करना चाहिये ॥ ९ ॥

लोकयात्राभयंलज्जादाक्षिण्यंत्यागशीलता ॥
पंचयत्रनविद्यंतेनकुर्यात्तत्रसंगतिम् ॥ १० ॥

टीका—जीविका, भय, लज्जा, कुशलता, देनेकी प्रकृति, जहां ये पांच नहीं वहांके लोगोंकेसाथ संगति न करनी चाहिये ॥ १० ॥

जानीयात्प्रेषणेभृत्यान्बान्धवान्व्यसनागमे॥
मित्रंचापत्तिकालेतुभार्यांचविभवक्षये ॥११॥

टीका—काममें लगानेपर सेवकोंको, दुःख आनेपर बान्धवों की, विपत्तिकालमें मित्रकी और विभव के नाश होनेपर स्त्रीकी परिक्षा होजाती है ॥ ११ ॥

आतुरेव्यसनेप्राप्तेदुर्भिक्षेशत्रुसंकटे ॥
राजद्वारेश्मशानेचयस्तिष्ठतिसबांधवः ॥१२॥

टीका—आतुरहोनेपर,दुःख प्राप्त होनेपर,कालपडनेपर बैरियोंसे संकट आनेपर राजाके समीप और स्मशानपर जो साथ रहता है वही बन्धु है ॥ १२ ॥

योध्रुवाणिपरित्यज्यअध्रुवंपरिसेवते ॥
ध्रुवाणितस्यनश्यन्तिअध्रुवंनष्टमेवहि ॥ १३ ॥

टीका-जो निश्चित वस्तुओंको छोड़कर अनिश्चितकी सेवा करता है उसकी निश्चित वस्तुओंका नाश हो जाता है अनिश्चित तो नष्टही है ॥ १३ ॥

वरयेत्कुलजांप्राज्ञोविरूपामपिकन्यकाम् ॥
रूपशीलांननीचस्यविवाहःसदृशेकुले ॥१४॥

टीका—बुद्धिमान् उत्तम कुलकी कन्या कुरूपाभी हो उसे बरै नीचकुलकी सुन्दरी हो तोभी उसको नहीं. इसकारण कि विवाह तुल्य कुलमें विहित है ॥ १४ ॥

नदीनांशस्त्रपाणीनांनखीनांशृंगिणांतथा ॥
विश्वासोनैवकर्त्तव्यःस्त्रीषुराजकुलेषुच॥१५॥

टीका—नदियोंका, शस्त्रधारियोंका, नखवाले और सिंगवाले जन्तुओंका, स्त्रियोंमें और राजकुलपर विश्वास नहीं करना चाहिये ॥ १५ ॥

विषादप्यमृतंग्राह्यममेध्यादपिकांचनम् ॥
नीचादप्युत्तमांविद्यांस्त्रीरत्नंदुष्कुलादपि।१६।

टीका—विषमेंसेभी अमृतको, अशुद्ध पदार्थोंमेंसेभी सोनेको, नीचेसेभी उत्तम विद्याको, और दुष्ट कुलसे भी स्त्रीरत्नको लेना योग्य है ॥ १६ ॥

स्त्रीणांद्विगुणअहारोलज्जाचापिचतुर्गुणा ॥
साहसंषड्गुणंचैवकामश्चाष्टगुणःस्मृतः ।१७।

टीका—पुरुषसे स्त्रियोंका अहार दूना लज्जा चौगुनी साहस छगुना, और काम आठगुना अधिक होता है ॥ १७ ॥

इति प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

---

## अथद्वितियोऽध्यायः २

अनृतंसाहसंमायामूर्खत्वमतिलोभता ॥
अशौचत्वंनिर्दयत्वंस्त्रीणांदोषाःस्वभावजाः।१।

टीका—असत्य, बिनाबिचार किसी काममें झटपट लगजाना, छल, मूर्खता, लोभ, अपवित्रता और निर्दयता ये स्त्रियोंके स्वाभाविक दोष हैं ॥ १ ॥

भोज्यंभोजनशक्तिश्चरतिशक्तिर्वराङ्गना ॥
विभवोदानशक्तिश्चनाल्पस्यतपसःफलम् ।२।

टीका—भोजनके योग्य पदार्थ और भोजनकी शक्ति, सुन्दर स्त्री, और रतिकी शक्ति, ऐश्वर्य और दानशक्ति इनका होना थोडे तपका फल नहीं है ॥ २ ॥

यस्यपुत्रोवशीभूतोभार्याचअनुगामिनी ॥
विभवेयश्चसंतुष्टस्तस्यस्वर्गइहैवहि ॥ ३ ॥

टीका--जिसका पुत्र वशमें रहता है और स्त्री इच्छाके अनुसार चलती है और जो विभव में संतोष रखता है उसको स्वर्ग यहांही है ॥ ३ ॥

तेपुत्रायेपितुर्भक्ताःसपितायस्तुपोषकः ॥
तन्मित्रंयत्रविश्वासःसाभार्यायत्रनिर्वृतिः॥४॥

टीका—वही पुत्र है, जो पिता का भक्त है. वही पिता है,जो पालन करता है,वही मित्र है, जिसपर विश्वास है, वही स्त्री है, जिससे सुख प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

परोक्षेकार्यहंतारंप्रत्यक्षेप्रियवादिनम् ॥
वर्जयेत्तादृशंमित्रंविषकुंभंपयोमुखम् ॥ ५ ॥

टीका—आंखके ओट होने पर काम बिगाडे, सन्मुख होनेपर मीठी मीठी बात बनाकर कहे, ऐसे मित्रको मुंहडेपर दूधसे और सब विषसे भरे घडे के समान

छोडदेना चाहिये ॥ ५ ॥

नविश्वसेत्कुमित्रेचमित्रेचापिनविश्वसेत् ॥
कदाचित्कुपितंमित्रंसर्वंगुह्यंप्रकाशयेत् ॥ ६ ॥

टीका--कुमित्रपर विश्वासतो किसी प्रकारसे नहीं करना चाहिये और सुमित्रपरभी विश्वास न रक्खे इसका कारण कि, कदाचित् मित्र रुष्ट होयतो सब गुप्त बातों को प्रसिद्ध करदे ॥ ६ ॥

मनसाचिंतितंकार्यंवाचानैवप्रकाशयेत् ॥
मंत्रेणरक्षयेद्गूढंकार्यंचापिनियोजयेत् ॥ ७ ॥

टीका--मनसे सोचे हुये कामका प्रकाश वचनसे न करे, किंतु मंत्रसे उसकी रक्षा करे और गुप्तही उसकार्य को काममें भी लावे ॥ ७ ॥

कष्टंचखलुमूर्खत्वंकष्टंचखलुयौवनम् ॥
कष्टात्कष्टतरंचैवपरगेहनिवासनम् ॥ ८ ॥

टीका--मूर्खता दुःख देती है, और युवापनभी दुःख देता है, परंतु दूसरे के गृहका वास तो बहुतही दुःख दायक होता है ॥ ८ ॥

शैलेशैलेनमाणिक्यंमौक्तिकंनगजेगजे ॥
साधवोनहिसर्वत्रचंदनंनवनेवने ॥ ९ ॥

टीका--सब पर्वतोंपर माणिक्य नहीं होता और मोती

सब हाथियोंमें नहीं मिलता, साधुलोग सबस्थानोंमें नहीं मिलते. और सब बनमें चंदन नहीं होता ॥ ६ ॥

पुत्राश्चविविधैःशीलैर्नियोज्याःसततंबुधैः ॥
नीतिज्ञाःशीलसंपन्नाभवंतिकुलपूजिताः॥१०॥

टीका—बुद्धिमान् लोग लड़कोंको नाना भांतिकी सुशीलतामें लगावें; इसकारण कि, नीतिके जानने वाले यदि शीलवान् होय तो कुलमें पूजित होतेहैं॥१०॥

मातारिपुःपिताशत्रुर्बालोयेननपाठ्यते ॥
सभामध्येनशोभंतेहंसमध्येबकोयथा ॥ ११ ॥

टीका—वह माता शत्रु और पिता बैरीहै जिसने अपने बालक को न पढाया. इस कारण कि सभाके बीच वे ऐसे शोभते, जैसे हंसोंके बीच बकुला ॥ ११ ॥

लालनाद्बहवोदोषास्ताडनाद्बहवोगुणाः ॥
तस्मात्पुत्रंचशिष्यंचताडयेन्नतुलालयेत्॥१२॥

टीका—दुलारनेसे बहुत दोष होते हैं. और दंड देनेसे बहुत गुण. इस हेतु पुत्र और शिष्यको दण्ड देना उचित है लालना नहीं ॥ १२ ॥

श्लोकेनवातदर्द्धेनतदर्द्धार्द्धाक्षरेणवा ॥
अबंध्यंदिवसंकुर्याद्दानाध्ययनकर्मभिः ॥१३॥

टीका—श्लोक वा श्लोकके अधिको अथवा अधिमेंसे अधिको प्रतिदिन पढना उचित है. इस कारण कि दान, अध्यन आदि कर्मसे दिनको सार्थक करना चाहिये ॥ १३ ॥

कांतावियोगःस्वजनापमानोरणस्यशेषःकुनृ-
परस्यसेवा ॥ दरिद्रभावोविषमासभाचविनाग्नि-
मेतेप्रदहन्तिकायम् ॥ १४ ॥

टीका—स्त्रीका विरह, अपने जनोंसे अनादर, युद्ध करके बचा शत्रु, कुत्सित राजाकी सेवा, दरिद्रता और अविवेकियोंकी सभा ये विना आगही शरीरको जलाते हैं १४ ॥

नदीतीरेचयेवृक्षाःपरगेहेषुकामिनि ॥
मंत्रिहीनाश्चराजानःशीघ्रंनश्यंत्यसंशयम्॥१५॥

टीका—नदीके तीरके वृक्ष, दूसरेके गृहमें जानेवाली स्त्री, मंत्रीरहित राजा, निश्चय है कि शीघ्रही नष्ट हो जातेहैं ॥ १५ ॥

बलंविद्याचविप्राणांराज्ञांसैन्यंबलंतथा ॥
बलंवित्तंचवैश्यानांशूद्राणांचकनिष्ठिका॥१६॥

टीका—ब्राह्मणोंका बल विद्या है, वैसेही राजाका बल सेना, वैश्योंका बल धन और शूद्रोंका बल सेवा ॥ १६ ॥

निर्धनंपुरुषंवेश्याप्रजाभग्नंनृपंत्यजेत् ॥
खगावीतफलंवृक्षंभुक्त्वाचअभ्यागतागृहम् ॥१७॥

टीका–वेश्या निर्धन पुरुषको, प्रजा शक्तिहीन राजाको, पक्षी फलरहित वृक्षको, और अभ्यागत भोजन करके घरको छोड़ देते हैं ॥ १७ ॥

गृहत्वादक्षिणांविप्रास्त्यजन्तियजमानकं ॥
प्राप्तविद्यागुरुंशिष्यादग्धारण्यंमृगास्तथा॥१८॥

टीका–ब्राह्मण दक्षिणा लेकर यजमानको त्याग देते हैं, शिष्य विद्या प्राप्त होजानेपर गुरुको, वैसेही जलेहुये वनको मृग छोड़देते हैं ॥ १८ ॥

दुराचारीदुराहष्टिर्दुरावासीचदुर्जनः ॥
यन्मैत्रीक्रियतेपुंसासतुशीघ्रंविनश्यति॥ १९ ॥

टीका–जिसका आचरण बुराहै, जिसकी दृष्टी पापमें रहती है, बुरेस्थानमें बसनेवाला और दुर्जन इन पुरुषोंकी मैत्री जिसके साथ की जाती है वह नर शीघ्रही नष्ट होजाता है ॥ १९ ॥

समानेशोभतेप्रीतीराज्ञिसेवाचशोभते ॥
वाणिज्यंव्यवहारेषुस्त्रीदिव्याशोभतेगृहे॥२०॥

टीका–समानजनमें प्रीति शोभती है, और सेवा राजाकी शोभती है, व्यवहारोंमें बनियाई, और

घरमें दिव्य सुंदर स्त्री शोभती है ॥ २० ॥

इति द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

---

## अथ तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

कस्यदोषःकुलेनास्तिव्याधिनाकेनपीडिताः॥
व्यसनंकेननप्राप्तंकस्यसौख्यंनिरन्तरम्॥१॥

टीका—किसके कुलमें दोष नहीं है, व्याधीने किसे पीडित न किया, किसको दुःख न मिला, किसको सदा सुखही रहा ॥ १ ॥

आचारःकुलमाख्यातिदेशमाख्यातिभाषणम्॥
संभ्रमःस्नेहमाख्यातिवपुराख्यातिभोजनम्॥२॥

टीका—आचार कुलको बतलाता है, बोली देशको जनाती है, आदर प्रीतिका प्रकाश करता है, शरीर भोजनको जताता है ॥ २ ॥

सुकुलेयोजयेत्कन्यांपुत्रंविद्यासुयोजयेत् ॥
व्यसनेयोजयेच्छत्रुमिष्टंधर्मेणयोजयेत् ॥ ३ ॥

टीका—कन्याको श्रेष्ठ कुलवालेको देना चाहिये, पुत्रको विद्यामें लगाना चाहिये शत्रुको दुःख पहुँचाना उचित है और मित्रको धर्मका उपदेश करना चाहिये ॥ ३ ॥

दुर्जनस्यचसर्पस्यवरंसर्पोनदुर्जनः ॥
सर्पोदंशतिकालेतुदुर्जनस्तुपदेपदे ॥ ४ ॥

टीका–दुर्जन और सर्प इनमें सांप अच्छा दुर्जन नहीं इस कारण कि सांप काल आनेपर काटता है दुर्जन पदपदमें ॥ ४ ॥

एतदर्थंकुलीनानांनृपाःकुर्वंतिसंग्रहम् ॥
आदिमध्यावसानेषुनत्यजन्तिचतेनृपम् ॥५॥

टीका–राजालोग कुलीनोंका संग्रह इस निमित्त करते हैं कि, वे आदि अर्थात् उन्नति, मध्य अर्थात् साधारण और अंत अर्थात् विपत्तिमें राजाको नहीं छोड़ते ॥ ५ ॥

प्रलयेभिन्नमर्यादाभवन्तिकिलसागराः ॥
सागराभेदमिच्छन्तिप्रलयेऽपिनसाधवः ॥६॥

टीका–समुद्र प्रलयके समयमें अपनी मर्यादको छोड़ देते हैं और सागर भेदकी इच्छाभी रखते हैं परन्तु साधुलोग प्रलय होनेपरभी अपनी मर्यादाको नहीं छोड़ते ॥ ६ ॥

मूर्खस्तुपरिहर्तव्यःप्रत्यक्षोद्विपदःपशुः ॥
भिद्यतेवाक्यशल्येनअदृशंकंटकंयथा ॥ ७ ॥

टीका–मूर्खको दूर करना उचित है, इस कारण

कि, देखनेमें वह मनुष्य हैं; परन्तु यथार्थ देखेतो दो पांवका पशु है और वाक्यरूप कांटेको बेधता है जैसे अन्धे को कांटा ॥ ७ ॥

रूपयौवनसम्पन्नाविशालकुलसम्भवाः ॥
विद्याहीनानशोभन्तेनिर्गंधाइवकिंशुकाः॥८॥

टीका—सुंदरता, तरुणता और बड़े कुलमें जन्म इनके रहतेभी विद्याहीन पुरुष बिनागन्ध पलाशढाक के फूलके समान नहीं शोभते ॥ ८ ॥

कोकिलानांस्वरोरूपंस्त्रीणांरूपंपतिव्रतम् ॥
विद्यारूपंकुरूपाणांक्षमारूपंतपस्विनाम् ॥९॥

टीका—कोकिलोंकी शोभा स्वर है, स्त्रियोंकी शोभा पातिव्रत, कुरूपोंकी शोभा विद्या है, तपस्वियोंकी शोभा क्षमा है ॥ ९ ॥

त्यजेदेकंकुलस्यार्थेग्रामस्यार्थेकुलंत्यजेत् ॥
ग्रामंजनपदस्यार्थेआत्मार्थेपृथिवींत्यजेत्॥१०॥

टीका—कुलके निमित्त एकको छोड़देना चाहिये, ग्राम के हेतु कुलका त्याग उचित है, देशके अर्थ ग्रामका और अपने अर्थ पृथिवीका अर्थात् सबका त्यागही उचित है ॥ १० ॥

उद्योगेनास्तिदारिद्र्यंजपतोनास्तिपातकम् ॥
मौनेनकलहोनास्तिनास्तिजागरितेभयम्॥११॥

टीका–उपाय करनेपर दरिद्रता नहीं रहती, जपने वालेको पाप नहीं रहता, मौन होनेसे कलह नहीं होता औ जागनेवालेके निकट भय नहीं आता॥११॥

अतिरूपेणवैसीताअतिगर्वेणरावणः ॥
अतिदानाद्बलिर्बद्धोह्यतिसर्वत्रवर्जयेत्॥१२॥

टीका–अतिसुंदरताके कारण सीता हरी गई, अति गर्वसे रावण मारा गया, बहुत दान देकर बलिको बंधना पड़ा; इस हेतु अतिको सब स्थल में छोड़ देना चाहिये ॥ १२ ॥

कोहिभारःसमर्थानांकिंदूरंव्यवसायिनाम् ॥
कोविदेशःसुविद्यानांकःप्रियःप्रियवादिनाम्१३

टीका--समर्थको कौन वस्तु भारी है, काम में तत्पर रहने वाले को क्या दूर है सुन्दर विद्यावालोंको कौन विदेश है, प्रियवादियोंको अप्रिय कौन है ॥ १३ ॥

एकेनापिसुवृक्षेणपुष्पितेनसुगन्धिना ॥
वासितंतद्वनंसर्वंसुपुत्रेणकुलंयथा ॥ १४ ॥

टीका--एकभी अच्छे वृक्षसे जिसमें सुन्दर फूल और गन्ध है ऐसे सब वन सुवासित होजाता है, जैसे सुपुत्रसे कुल ॥ १४ ॥

एकेनशुष्कवृक्षेणदह्यमानेनवह्निना ॥
दह्यतेतद्वनंसर्वंकुपुत्रेणकुलंयथा ॥ १५ ॥

टीका–आगसे जलतेहुये एकही सूखे वृक्षसे वह सब वन ऐसे जलजाता है जैसे कुपुत्रसे कुल ॥१५॥

एकेनापिसुपुत्रेणविद्यायुक्तेनसाधुना ॥
आल्हादितंकुलंसर्वंयथाचंद्रेणशर्वरी ॥१६॥

टीका–विद्यायुक्त भला एकभी सुपुत्रसे सब कुल ऐसे आनंदित होजाता है. जैसे चंद्रमासे रात्रि॥१६॥

किंजातैर्बहुभिःपुत्रैःशोकसंतापकारकैः ॥
वरमेकःकुलालंबीयत्रविश्राम्यतेकुलम्॥१७॥

टीका–शोक संताप करनेवाले उत्पन्न बहुपुत्रोंसे क्या ? कुलको सहारा देनेवाला एकही पुत्र श्रेष्ठ है. जिसमें कुल विश्राम पाता है॥ १७ ॥

लालयेत्पञ्चवर्षाणिदशवर्षाणिताडयेत् ॥
प्राप्तेतुषोडशंवर्षेपुत्रेमित्रत्वमाचरेत् ॥ १८ ॥

टीका–पुत्रको पांच बरसतक दुलारे, उपरांत दश वर्ष पर्यंत ताडन करे. सोलवें वर्ष की प्राप्ति होने पर पुत्रमें मित्रसमान आचरण करे ॥ १८ ॥

उपसर्गेऽन्यचक्रेचदुर्भिक्षेचभयावहे ॥
असाधुजनसंपर्केयःपलातिसजीवति ॥१९॥

टीका–उपद्रव उठनेपर, शत्रुके आक्रमण करनेपर, भयानक अकाल पडने पर और खलजनके संग होने

पर जो भागता है वह जीवता रहता है ॥ १९ ॥

धर्मार्थकाममोक्षेषुयस्यकोऽपिनविद्यते ।:
जन्मजन्मनिमर्त्येषुमरणंतस्यकेवलम् ॥२०॥

टीका–धर्म, अर्थ काम और मोक्ष इनमेंसे जिसको कोईभी न भया उसको मनुष्योंमें जन्म होनेका फल केवल मरणही हुआ ॥ २० ॥

मूर्खायत्रनपूज्यंतेधान्यंयत्रसुसंचितम् ॥
दाम्पत्यकलहोनास्तितत्रश्रीःस्वयमागता।२१।

टीका–जहां मूर्ख नहीं पूजे जाते, जहां अन्न संचित रहता है और जहां स्त्रीपुरुषमें कलह नहीं होता वहां आपही लक्ष्मी विराजमान रहती है ॥ २१ ॥

॥ इति तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

---

## अथ चतुर्थोऽध्यायः ४

आयुःकर्मचवित्तंचविद्यानिधनमेवच ॥
पंचतानिहिसृज्यन्तेगर्भस्थस्यैवदेहिनः ॥१॥

टीका–यह निश्चय है कि, आयुर्दाय, कर्म, धन, विद्या और मरण ये पांचों जब जीव गर्भहीमें रहता है तबही लिखदिये जाते हैं ॥ १ ॥

साधुभ्यस्तेनिवर्तन्तेपुत्रामित्राणिबांधवाः ॥
येचतैःसहगंतारस्तद्धर्मात्सुकृतंकुलम् ॥ २ ॥

टीका—पुत्र, मित्र, बन्धु ये साधु जनोंसे निवृत होजाते हैं और जो उनका संग करते हैं उनके पुण्य से उनका कुल सुकृती होजाता है ॥ २ ॥

दर्शनध्यानसंस्पर्शैर्मत्सीकूर्मीचपक्षिणी ॥
शिशुंपालयतेनित्यंतथासज्जनसंगतिः ॥ ३ ॥

टीका—मछली कछुई और पक्षी ये दर्शन ध्यान और स्पर्शसे जैसे बच्चोंको सर्वदा पालती हैं वैसेही सज्जनोंकी संगति ॥ ३ ॥

यावत्स्वस्थोह्ययंदेहोयावन्मृत्युश्चदूरतः ॥
तावदात्महितंकुर्यात्प्राणांतेकिंकरिष्यति॥४॥

टीका—जबलों देह निरोग है और तबलग मृत्यु दूर है तत्पर्यंत अपना हित पुण्यादि करना उचित्त है. प्राणके अंत होजानेपर कोई क्या करेगा॥ ४ ॥

कामधेनुगुणाविद्याह्यकालेफलदायिनी ॥
प्रवासेमातृसदृशीविद्यागुप्तंधनंस्मृतम्॥ ५ ॥

टीका—विद्यामें कामधेनुके समान गुण है इसकारण कि अकालमेंभी फल देती है. विदेशमें माताके समान है विद्याको गुप्त धन कहते हैं ॥ ५ ॥

एकोऽपिगुणवान्पुत्रोनिर्गुणैश्चशतैर्वरः ॥
एकश्चंद्रस्तमोहंतिनचताराःसहस्रशः ॥ ६ ॥

टीका–एकभी गुणी पुत्र श्रेष्ठ है सो सैकड़ों गुण-रहितोंसे क्या ? एकही चन्द्र अन्धकारको नष्ट कर देता है, सहस्र तारे नहीं ॥ ६ ॥

मूर्खश्चिरायुर्जातोऽपितस्माज्जातमृतोवरः ॥
मृतःसचाल्पदुःखाययावज्जीवंजडोदहेत् ॥७॥

टीका–मूर्ख बालक चिरजीवीभी हो उससे उत्पन्न होतेही जो मरगया वह श्रेष्ठ है. इस कारण कि मरा थोडेही दुःखका कारण होता है जड़ जबलों जीता है तबलों दाहता रहता है ॥ ७ ॥

कुग्रामवासःकुलहीनसेवाकुभोजनंक्रोधमुखी चभार्य्या ॥ पुत्रश्चमूर्खोविधवाचकन्याविनाग्नि नाषट् प्रदहंतिकायम् ॥ ८ ॥

टीका–कुग्राममें वास, नीच कुलकी सेवा, कुभोजन, कलही स्त्री, मूर्ख पुत्र, विधवा कन्या ये छः बिना आगही शरीर को जलाते हैं ॥ ८ ॥

किंतयाक्रियतेधेन्वायानदोग्ध्रीनगुर्विणी ॥
कोऽर्थःपुत्रेणजातेनयोनविद्वान्नभक्तिमान् ॥९॥

टीका–उसगायसे क्या लाभ है जो न दूध देवे, न गाभिन होवे, और ऐसे पुत्र हुएसे क्या लाभ जो न विद्वान् भया न भक्तिमान् ॥ ९ ॥

**संसारतापदग्धानात्रयोविश्रांतिहेतवः ॥**
**अपत्यंचकलत्रंचसतांसंगतिरेवच ॥ १० ॥**

टीका—संसारके तापसे जलतेहुये पुरुषोंके विश्रामके हेतु तीन हैं, लडका, स्त्री और सज्जनोंकी संगति ॥१०॥

**सकृज्जल्पन्तिराजानःसकृज्जल्पंतिपंडिताः ॥**
**सकृत्कन्याःप्रदीयन्तेत्रीण्येतानिसकृत्सकृत् ११**

टीका—राजालोग एकहीबार आज्ञा देते हैं, पंडित लोग एकहीबार बोलते हैं, कन्याका दान एकहीबार होता है ये तीनों बात एकबारही होती हैं ॥ ११ ॥

**एकाकिनातपोद्वाभ्यापठनंगायनंत्रिभिः ॥**
**चतुर्भिर्गमनंक्षेत्रंपंचभिर्बहुभीरणम् ॥ १२ ॥**

टीका—अकेलेमें तप, दोसे पढना, तीनसे गाना, चारसे पन्थमें चलना, पांचसे खेती और बहुतों से युद्ध भलीभांतिसे बनते हैं ॥ १२ ॥

**साभार्यायाशुचिर्दक्षासाभार्यायापतिव्रता ॥**
**साभार्यापतिप्रीतासाभार्यासत्यवादिनी॥१३॥**

टीका—वही भार्या है,जो पवित्र और चतुर वही भार्या है; जो पतिव्रता है. वही भार्या है; जिसपर पतीकी प्रीति है. वही भार्या है;जो सत्य बोलती है अर्थात् दान मान पोषण पालनके योग्य है ॥ १३ ॥

अपुत्रस्यगृहंशून्यंदिशःशून्यास्त्वबांधवः ॥
मूर्खस्यहृदयंशून्यंसर्वशून्यादरिद्रता ॥ १४ ॥

टीका—निपुत्रीका घर सूना है, बन्धुरहित दिशा शून्य है. मूर्खका हृदय शून्य है और सर्वशून्य दारिद्रता है ॥ १४ ॥

अनभ्यासेविषंशास्त्रमजीर्णेभोजनंविषम् ॥
दरिद्रस्यविषंगोष्ठीवृद्धस्यतरुणीविषम् ॥ १५ ॥

टीका—विनाभ्यासके शास्त्र विष होजाता है, विना पचे भोजन विष होजाता है. दारिद्र को गोष्ठी विष और वृद्धको युवती विष जानपडती है ॥ १५ ॥

त्यजेद्धर्मंदयाहीनंविद्याहीनंगुरुंत्यजेत् ॥
त्यजेत्क्रोधमुखींभार्यांनिस्नेहान्बांधवांत्यजेत् १६

टीका—दयारहित धर्मको छोडदेना चाहिये, विद्या विहीन गुरुका त्याग उचित है, जिसके मुंहसे क्रोध प्रगट होता होय ऐसी भार्याको अलग करना चाहिये और विनाप्रीति बांधवोंका त्याग विहित है ॥ १६ ॥

अध्वाजरामनुष्याणांवाजिनांबन्धनंजरा ॥
अमैथुनंजरास्त्रीणांवस्त्राणामातपोजरा ॥१७॥

टीका—मनुष्योंको बुढापनपथ है, घोडोंको बांधरखना वृद्धता है, स्त्रियोंको अमैथुन बुढापा है

और वस्त्रोंको घाम नूढ़ता है ॥ १७ ॥

कःकालःकानिमित्राणिकोदेशःकौऽव्ययागमौ
कस्याहंकाचमेशक्तिरितिचिंत्यंमुहुर्मुहुः॥१८॥

टीका—किसकालमें क्या करना चाहिये, मित्र कौन है, देश कौन है, लाभव्यय क्या है, किसका मैं हूं, मुझमें क्या शक्ति है ये सब बार बार विचारना योग्य है ॥ १८ ॥

अग्निर्देवोद्विजातीनांमुनीनांहृदिदैवतम् ॥
प्रतिमास्वल्पबुद्धीनांसर्वत्रसमदर्शिनां ॥ १९ ॥

टीका—ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, उनका देवता अग्नि है. मुनियोंके हृदयमें देवता रहता है. अल्पबुद्धियों के मूर्ति और समदर्शियोंको सबस्थानमें देवताहै॥१९॥

इति चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

———:+:———

## अथ पंचमोऽध्यायः ५

पतिरेवगुरुःस्त्रीणांसर्वस्याभ्यागतोगुरुः ॥
गुरुरग्निर्द्विजातीनांवर्णानांब्राह्मणोगुरुः ॥ १ ॥

टीका—स्त्री का गुरु पतिही है, अभ्यागत सबका गुरु है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, इनका गुरु अग्नि है

और चारों वर्णों में गुरु ब्राह्मण है ॥ १ ॥

यथाचतुर्भिःकनकंपरीक्ष्यतेनिघर्षणच्छेदनता
पताडनैः॥ तथाचतुर्भिःपुरुषःपरीक्ष्यतेत्यागेन
शीलेनगुणेनकर्मणा ॥ २ ॥

टीका–घिसना, काटना, तपाना, पीटना इनचार प्रकारों से जैसे सोनेकी परीक्षा कीजाती है, वैसेही दान, शील, गुण और आचार इनचारों प्रकारसे पुरुषकी भी परीक्षा कीजाती है ॥ २ ॥

तावद्भयेषुमेतव्यंयावद्भयमनागतम् ॥
आगतंतुभयंदृष्ट्वाप्रहर्तव्यमशंकया ॥ ३ ॥

टीका–तबतकही भयोंसे डरना चाहिये जबतक भय नहीं आया, और आयेहुये भयको देखकर प्रहार करना उचित है ॥ ३ ॥

एकोदरसमुद्भूताएकनक्षत्रजातकाः ॥
नभवंतिसमाःशीलैर्यथावदरिकंटकाः ॥ ४ ॥

टीका–एकही गर्भसे उत्पन्न और एकही नक्षत्र जायमान शीलमें समान नहीं होते जैसे बेर और उसके कांटे ॥ ४ ॥

निःस्पृहोनाधिकारीस्यान्नाकामोमंडनप्रियः॥
नाविदग्धःप्रियंब्रूयात्स्पष्टवक्तानवंचकः ॥५॥

टीका--जिसको किसी विषयकी वांछा न होगी वह किसी विषयका अधिकार नहीं होगा, जो कामी न होगा वह शरीर की शोभा करनेवाली वस्तुओंमें प्रीति नहीं रक्खेगा; जो चतुर न होगा वह प्रिय नहीं बोल सकेगा और स्पष्ट कहनेवाला छली नहीं होगा ॥ ५ ॥

मूर्खाणांपंडिताद्वेष्याअधनानांमहाधनाः ॥
दुर्भगाणांचसुभगाःकुलटानांकुलांगनाः॥६॥

टीका--मूर्ख पंडितोंसे,दरिद्री धनियोंसे,व्यभिचारिणी कुलस्त्रियोंसे,और विधवा सुहागिनियों से बुरा मानती हैं ॥ ६ ॥

आलस्योपहताविद्यापरहस्तेगतंधनम् ॥
अल्पबीजंहतंक्षेत्रंहतंसैन्यमनायकम् ॥ ७ ॥

टीका—आलस्यसे विद्या नष्ट होजाती है, दूसरेके हाथमें जानेसे धन निरर्थक होजाता है, बीजकी न्यूनतासे खेत हत होजाता है, सेनापतिके बिना सेना नष्ट होजाती हैं ॥ ७ ॥

अभ्यासाद्धार्यतेविद्याकुलंशीलेनधार्यते ॥
गुणेनज्ञायतेत्वार्यःकोपोनेत्रेणगम्यते ॥ ८ ॥

टीका—अभ्याससे विद्या, सुशीलतासे कुल, गुणसे भला मनुष्य और नेत्रसे कोप ज्ञात होता है ॥ ८ ॥

वित्तेनरक्ष्यतेधर्मोविद्यायोगेनरक्ष्यते ॥
मृदुनारक्ष्यतेभूपःसत्स्त्रियारक्ष्यतेगृहम् ॥ ९ ॥

टीका—धनसे धर्मकी रक्षा होती है, यम नियम आदि योग से ज्ञान रक्षित रैता है, मृदुतासे राजाकी रक्षा होती है, भली स्त्रीसे घरकी रक्षा होती है ॥ ९ ॥

अन्यथावेदपाण्डित्यंशास्त्रमाचारमन्यथा ॥
अन्यथायद्वदन्शांतंलोकाःक्लिश्यन्तिचान्यथा

टीका—वेदकी पांडित्यको व्यर्थ प्रकाश करनेवाला, शास्त्र और उसके आचारके विषयमें व्यर्थ विवाद करनेवाला, शांत पुरुषोंको अन्यथा कहनेवाला, ये लोग व्यर्थही क्लेश उठाते हैं ॥ १० ॥

दारिद्र्यनाशनंदानंशीलंदुर्गतिनाशनं ॥
अज्ञाननाशिनीप्रज्ञाभावनाभयनाशिनी ॥११॥

टीका—दान दरिद्रताका नाश करता है सुशीलता दुर्गतिका, बुद्धि अज्ञान भक्ति भयका नाश करती है, ॥ ११ ॥

नास्तिकामसमोव्याधिर्नास्तिमोहसमोरिपुः॥
नास्तिकोपसमोवह्निर्नास्तिज्ञानात्परंसुखम् १२

टीका—कामके समान दूसरी व्याधि नहींहै, अज्ञान के समान दूसरा वैरी नहीं है, क्रोधके तुल्य दूसरी

भाग नहीं है, ज्ञानसे परे सुख नहीं है ॥ १२ ॥

जन्ममृत्युहियात्येकोभुनक्त्येकःशुभाशुभम् ॥
नरकेषुपतत्येकएकोयातिपराङ्गतिम् ॥ १३ ॥

टीका—यह निश्चय है कि एकही पुरुष जन्ममरण पाता है सुखदुःख एकही भोगता है एकही नरकोंमें पड़ता है और एकही मोक्ष पाता है, अर्थात् इन कामोंमें कोई किसीकी सहायता नहीं करसक्ता ॥ १३ ॥

तृणंब्रह्मविदःस्वर्गंतृणंसूरस्यजीवितं ॥
जिताक्षस्यतृणंनारीनिस्पृहस्यतृणंजगत् ॥ १४ ॥

टीका—ब्रह्मज्ञानीको स्वर्ग तृण है, शूरको जीवन तृणहै, जिसने इन्द्रियोंको वश किया उसे स्त्री तृणके तुल्य जानपड़ती है, निस्पृहको जगत् तृणहै ॥ १४ ॥

विद्यामित्रंप्रवासेषुभार्यामित्रंगृहेषु च ॥
व्याधितस्यौषधंमित्रंधर्मोमित्रंमृतस्य च ॥ १५ ॥

टीका—विदेशमें विद्या मित्र होती है, गृहमें भार्या मित्र है, रोगीका मित्र औषध है और मरे का मित्र धर्म है ॥ १५ ॥

वृथावृष्टिःसमुद्रेषुवृथातृप्तेषुभोजनम् ॥
वृथादानंधनाढ्येषुवृथादीपोदिवापि च ॥ १६ ॥

टीका—समुद्रोंमें वर्षा वृथा है, और भोजनसे तृप्तको

भोजन निरर्थक है, धनीको धन देना व्यर्थ है और दिनमें दीप व्यर्थ है ॥ १६ ॥

नास्तिमेघसमंतोयंनास्तिचात्मसमंबलम् ॥
नास्तिचक्षुःसमंतेजोनास्तिधान्यसमंप्रियम्१७।

टीका–मेघके जलके समान दूसरा जल नहीं अपने बल समान दूसरे का बल नहीं इस कारण कि समय पर काम आताहै. नेत्रके तुल्य दूसरा प्रकाश करनेवाला नहीं है और अन्नके सदृश दूसरा प्रिय पदार्थ नहीं है ॥ १७ ॥

अधनाधनमिच्छन्तिवाचंचैवचतुष्पदाः ॥
मानवाःस्वर्गमिच्छंतिमोक्षमिच्छंतिदेवताः।१८।

टीका–धनहीन धन चाहते हैं, और पशु बचन, मनुष्य स्वर्ग चाहते हैं, और देवता मुक्तिकी इच्छा रखते हैं ॥ १८ ॥

सत्येनधार्यतेपृथ्वीसत्येनतपतेरविः ॥
सत्येनवातिवायुश्चसर्वंसत्येप्रतिष्ठितम् ॥१९॥

टीका–सत्यसे पृथ्वी स्थिर है, और सत्यहीसे सूर्य तपते हैं, सत्यहीसे वायु बहती है, सब सत्यहीसे स्थिर है ॥ १९ ॥

चलालक्ष्मीश्चलाप्राणाश्चलेजीवितमंदिरे ॥
चलाचलेचसंसारेधर्मएकोहिनिश्चलः ॥ २० ॥

टीका—लक्ष्मी नित्य नहीं है, प्राण, जीवन और घर ये सब स्थिर नहीं हैं, निश्चय है कि इस चराचर संसारमें केवल धर्महीं निश्चल है ॥ २० ॥

नराणान्नापितोधूर्तःपक्षिणांचैववायसः ॥
चतुष्पदांशृगालस्तुस्त्रीणांधूर्ताचमालिनी॥२१॥

टीका--पुरुषोंमें नापित, और पक्षियोंमें कौवा वंचक होता है, पशुओंमें सियार वंचक होता है और स्त्रियों में मालिन धूर्त होती है ॥ २१ ॥

जनिताचोपनेताचयस्तुविद्यांप्रयच्छति ॥
अन्नदाताभयत्रातापंचैतेपितरःस्मृताः ॥२२॥

टीका--जन्मानेवाला, यज्ञोपवीत आदि संस्कार करानेवाला, विद्या देनेवाला है, अन्नदेनेवाला, भय से बचानेवाला ये पांच पिता गिनेजाते हैं ॥ २२ ॥

राजपत्नीगुरोःपत्नीमित्रपत्नीतथैवच ॥
पत्नीमातास्वमाताचपंचैतामातरःस्मृताः॥२३ ॥

टीका--राजाकी भार्या, गुरुकी स्त्री, वैसेही मित्र की पत्नी सास और अपनी जननी (माता) इन पांचों को माता कहते हैं ॥ २३ ॥

इतिपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

---

## अथ षष्ठमोऽध्यायः ६

श्रुत्वाधर्मंविजानातिश्रुत्वात्यजतिदुर्मतिम् ॥
श्रुत्वाज्ञानमवाप्नोतिश्रुत्वामोक्षमवाप्नुयात् ॥ १ ॥

टीका--मनुष्य शास्त्रको सुन कर धर्मको जानता है दुर्बुद्धिको छोडता है, ज्ञान पाता है मोक्ष पाता है ॥ १

काकःपक्षिषुचंडालःपशूनांचैवकुक्कुरः ॥
पापोमुनीनांचांडालःसर्वेषांचैवनिंदकः ॥ २ ॥

टीका--पक्षियोंमें कौवा, और पशुवोंमें कुकुर चांडाल होता है, मुनियोंमें चांडाल पाप है, और सबमें चांडाल निन्दक है ॥ २ ॥

भस्मनाशुद्ध्यतेकांस्यंताम्रमम्लेनशुद्ध्यति ॥
रजसाशुद्ध्यतेनारीनदीवेगेनशुद्ध्यति ॥ ३ ॥

टीका--कांसेका पात्र राखसे, तांबेका मल खटाईसे, स्त्री रजस्वला होनेपर और नदी धाराके वेगसे पवित्र होती है ॥ ३ ॥

भ्रमन्संपूज्यतेराजाभ्रमन्संपूज्यतेद्विजः ॥
भ्रमन्संपूज्यतेयोगीस्त्रीभ्रमन्तीविनश्यति ॥ ४ ॥

टीका--भ्रमण करने वाले राजा, ब्राह्मण, योगी पूजित होते हैं परंतु स्त्री घूमनेसे भ्रष्ट होजाती है ॥ ४ ॥

यस्यार्थास्तस्यमित्राणियस्यार्थास्तस्यबान्धवाः
यस्यार्थाःसपुमाँल्लोकेयस्यार्थःसचपंडितः॥५॥

टीका—जिसके धन है, उसीका मित्र, और उसीके बांधव, होते हैं, और वही पुरुष गिना जाता है, और वही पंडित कहाता है ॥ ५ ॥

तादृशीजायतेबुद्धिर्व्यवसायोपितादृशः ॥
सहायास्तादृशाएवयादृशीभवितव्यता ॥ ६ ॥

टीका—वैसेही बुद्धि और वैसाही उपाय होता है और वैसेही सहायक मिलते हैं जैसा होनहार है ॥ ६ ॥

कालःपचतिभूतानिकालःसंहरतेप्रजाः ॥
कालःसुप्तेषुजागर्तिकालोहिदुरतिक्रमः ॥ ७ ॥

टीका—काल सब प्राणियोंको खाजाता है और कालही सब प्रजाका नाश करता है. सब पदार्थके लय होजाने पर काल जागता रहता है कालको कोई नहीं टाल सक्ता ॥ ७ ॥

नपश्यतिचजन्मान्धःकामान्धोनैवपश्यति ॥
मदोन्मत्तानपश्यंतिअर्थीदोषंनपश्यति ॥ ८ ॥

टीका—जन्मका अन्धा नहीं देखता, काम से जो अन्धा होरहा है उसको सूझता नहीं, मदोन्मत्त किसी को देखता नहीं और अर्थी दोषको नहीं देखता ॥ ८ ॥

स्वयंकर्मकरोत्यात्मास्वयंतत्फलमश्नुते ॥
स्वयंभ्रमतिसंसारेस्वयंतस्माद्विमुच्यते ॥ ९ ॥

टीका—जीव आपही कर्म करता है और उसका फलभी आपही भोगता है, आपही संसार में भ्रमता है और आपही उससे मुक्त भी होता है ॥ ९ ॥

राजाराष्ट्रकृतंपापंराज्ञःपापंपुरोहितः ॥
भर्ताचस्त्रीकृतंपापंशिष्यपापंगुरुस्तथा ॥१०॥

टीका—अपने राज्यमें किये हुवे पापको राजा, और राजा के पापको पुरोहित भोगता है, स्त्रीकृतपापको स्वामी भोगता है, वैसेही शिष्यके पापको गुरु ॥ १० ॥

ऋणकर्तापिताशत्रुर्माताचव्यभिचारिणी ॥
भार्यारूपवतीशत्रुःपुत्रशत्रुरपण्डितः ॥ ११ ॥

टीका—ऋण करनेवाला पिता शत्रु है, व्यभिचारिणी माता और सुन्दरी स्त्री शत्रु है, और मूर्ख पुत्र वैरी है ॥ ११ ॥

लुब्धमर्थेनगृह्णीयात्स्तब्धमंजलिकर्मणा ॥
मूर्खंछंदानुवृत्त्याचयथार्थत्वेनपण्डितम् ॥१२॥

टीका—लोभीको धनसे, अहंकारीको हाथ जोड़नेसे, मूर्खको उसके अनुसार वर्तनेसे और पंडितको सचाईसे, वश करना चाहिये ॥ १२ ॥

वरंनराज्यं नकुराजराज्यं वरंनमित्रंनकुमित्र मित्रं । वरंनशिष्योनकुशिष्यशिष्योवरंनदारा नकुदार दाराः ॥ १३ ॥

टीका—राज्य न रहना यह अच्छा, परन्तु कुराजाका राज्य होना यह अच्छा नहीं. मित्रका न होना यह अच्छा, परंतु कुमित्रको मित्र करना अच्छा नहीं, शिष्य नहो यह अच्छा परंतु निंदित शिष्य कहलावे यह अच्छा नहीं, भार्या न रहें यह अच्छा पर कुभार्या का भार्या होना अच्छा नहीं ॥ १३ ॥

कुराजराज्येनकुतःप्रजासुखं
कुमित्रमित्रेणकुतोऽभिनिर्वृतिः ॥
कुदारदारैश्चकुतोगृहेरतिः
कुशिष्यमाध्यापयतःकुतोयशः ॥१४॥

टीका—दुष्ट राजाके राज्यमें प्रजाको सुख, और कुमित्र मित्रसे आनन्द, कैसे होसक्ताहै, दुष्ट स्त्रीसे गृह में प्रीति और कुशिष्यको पढ़ानेवालेकी कीर्ति, कैसे होगी ॥ १४ ॥

सिंहादेकंबकादेकंशिक्षेच्चत्वारिकुक्कुटात्॥
वायसात्पंचशिक्षेच्चषट्शुनस्त्रीणिगर्दभात्॥१५॥

टीका—सिंहसे एक, बकुलेसे एक, कक्कुटसे चार, कौवेसे पांच, कुत्तेसे छः और गदहेसे तीन गुण

सीखना उचित है ॥ १५ ॥

प्रभूतंकार्यमल्पंवातन्नरःकर्तुमिच्छति ॥
सर्वारंभेणतत्कार्यंसिंहादेकंप्रचक्षते ॥ १६ ॥

टीका—कार्य छोटा हो वा बड़ा, जो करणीयहो उसको सब प्रकारके प्रयत्नसे करना उचित है, इस एकको सिंहसे सिखना कहते हैं ॥ १६ ॥

इंद्रियाणिचसंयम्यवकवत्पंण्डितोनरः
देशकालवलंज्ञात्वासर्वकार्याणिसाधयेत् ।१७।

टीका—विद्वान् पुरुषको चाहिये कि, इन्द्रियोंका संयम करके देश काल और बलको समझकर वकुलाके समान सब कार्यको साधे ॥ १७ ॥

प्रत्युत्थानंचयुद्धंचसंविभागंचवन्धुषु ॥
स्वयमाक्रम्यभोगंचशिक्षेच्चत्वारिकुक्कुटात१८

टीका—उचितसमय में जागना, रणमें उद्यत रहना और बन्धुओंको उनका भाग देना और आप आक्रमण करके भोग करैं, इनचार बातोंको कुक्कुटसे सीखना चाहिये ॥ १८ ॥

गूढमैथुनंचारित्वम्कालेचालयसंग्रहम् ॥
अप्रमादमविश्वासंपंचशिक्षेच्चवायसात् ॥१९॥

टीका—छिपकर मैथुन करना धैर्य करना समयमें घर

संग्रह करना सावधान रहना और किसीपर विश्वास न करना इन पांचोंको कौवेसे सीखना उचित है ॥१९॥

बह्वाशीस्वल्पसंतुष्टःसुनिद्रोलघुचेतनः ॥
स्वामिभक्तश्चशूरश्चषडेतेश्वानतोगुणाः ॥२०॥

टीका—बहुत खानेकी शक्ति रहतेभी थोडेहीसे संतुष्ट होना, गाढ निद्रा रहतेभी झटपट जागना, स्वामिकी भक्ति और शूरता इन छः गुणोंको कुत्ते से सीखना चाहिये ॥ २० ॥

सुश्रांतोऽपिवहेद्भारंशीतोष्णंनचपश्यति ॥
संतुष्टश्चरतेनित्यंत्रीणिशिक्षेच्चगर्दभात् ॥२१॥

टीका—अत्यंत थकजानेपरभी बोझको ढोते जाना, शीत और उष्णपर दृष्टि न देना, सदा सन्तुष्ट होकर विचरना, इन तीन बातोंको गदहेसे सीखना चाहिये२१

यएतान्विंशतिगुणानाचरिष्यतिमानवः ॥
कार्यावस्थासुसर्वासुअजेयःसभविष्यति॥२२॥

टीका—जो नर इन बीस गुणोंको धारण करेगा वह सदा सब कार्योंमें विजयी होगा ॥ २२ ॥

इति षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

## अथ सप्तमोऽध्यायः ७

अर्थनाशंमनस्तापंगृहिणीचरितानिच ॥
नीचवाक्यंचापमानंमतिमान्नप्रकाशयेत् ॥१॥

टीका–धनका नाश,मनकाताप,गृहणीकाचरित्र नीच का वचन और अपमानइनको बुद्धिमान् प्रकाश नकरे।

धनधान्यप्रयोगेषुविद्यासंग्रहणेषुच ॥
आहारेव्यवहारेचत्यक्तलज्जःसुखीभवेत् ॥ २ ॥

टीका–अन्न और धनके व्यापारमें विद्याके संग्रह करने में, आहार और व्यहारमें जो पुरुप लज्जाको दूर रक्खेगा वह सुखी होगा ॥ २ ॥

संतोषामृततृप्तानांयत्सुखंशांतिरेवच ॥
नचतद्धनलुब्धानामितश्चेतश्चधावताम् ॥ ३ ॥

टीका–संतोषरूपी अमृतसे जो लोग तृप्त होते हैं उनको जो शांतिसुख होता है वह धनके लोभसे जो इधर उधर दौडा करते हैं उनको नहीं होता ॥ ३ ॥

संतोषस्त्रिषुकर्तव्यःस्वदारेभोजनेधने ॥
त्रिषुचैवनकर्तव्योऽध्ययनेजपदानयोः ॥ ४ ॥

टीका–अपनी स्त्री भोजन और धन इन तीनोंमें सन्तोष करना चाहिये. पढना जप और दान इन तीनमें सन्तोष कभी नहीं करना चाहिये ॥ ४ ॥

विप्रयोर्विप्रवह्न्योश्चदंपत्योःस्वामिभृत्ययोः ॥
अन्तरेणनगंतव्यंहलस्यवृषभस्यच ॥ ५ ॥

टीका—दो ब्राह्मण, ब्राह्मण और अग्नि, स्त्री पुरुष, स्वामी भृत्यहल और बैल इनके मध्य होकर नहीं जाना चाहिये ॥ ५ ॥

पादाभ्यांनस्पृशेदग्निंगुरुंब्राह्मणमेवच ॥
नैवगांनकुमारींचनवृद्धंनशिशुंतथा ॥ ६ ॥

टीका—अग्नि, गुरु और ब्राह्मण, इनको पैरसे कभी नहीं छूना चाहिये वैसेही गौको कुमारीको, वृद्धको और बालकको, पैरसे न छूना चाहिये ॥ ६ ॥

शकटंपंचहस्तेनदशहस्तेनवाजिनम् ॥
हस्तिहस्तसहस्रेणदेशत्यागेनदुर्जनम् ॥ ७ ॥

टीका--गाडी को पांच हाथ पर, घोडेको दस हाथ पर, हाथी को हजार हाथपर, दुर्जनको देश त्याग करके छोडना चाहिये ॥ ७ ॥

हस्तीह्यंकुशमात्रेणवाजीहस्तेनताड्यते ॥
शृंगीलगुडहस्तेनखड्गहस्तेनदुर्जनः ॥ ८ ॥

टीका--हाथी केवल अंकुशसे, घोडा हाथसे, सींग वाले जन्तु लाठीसे और दुर्जन तरवारसंयुक्त हाथ से दंड पाते हैं ॥ ८ ॥

तुष्यन्तिभोजनेविप्रामयुराघनगर्जिते ॥
साधव:परसम्पत्तौखला: परविपत्तिषु ॥ ९ ॥

टीका–भोजनके समय ब्राह्मण और मेघके गर्जते पर मयूर, दूसरेको सम्पति प्राप्त होनेपर साधु और दूसरेको विपत्ति आनेपर दुर्जन सन्तुष्ट होते हैं॥९॥

अनुलोमेनवलिनंप्रतिलोमेनदुर्वलम् ॥
आत्मतुल्यवलंशत्रुंविनयेनवलेनवा ॥ १० ॥

टीका–वली वैरीको उसके अनुकूल व्यवहार करने से यदि वह दुर्वल हो तो उसे प्रतिकूलतासे वश करै, वलमें अपने समान शत्रुको विनयसे अथवा वलसे जीते ॥ १० ॥

वाहुवीर्यवलंराज्ञोव्राह्मणोव्रह्मविद्वली ॥
रूपयौवनमाधुर्यंस्त्रीणांवलमनुत्तमम् ॥ ११ ॥

टीका–राजाको बाहुवीर्य बल है और ब्राह्मण ब्रह्मज्ञानी वा वेदपाठी बली होता है और स्त्रियोंको सुन्दरता, तरुणता और मधुरता अति उत्तम बल है ॥ ११ ॥

नात्यन्तंसरलैर्भाव्यंगत्वापश्यवनस्थलीम् ॥
छिद्यंतेसरलास्तत्रकुब्जास्तिष्ठंतिपादपा: ।१२।

टीका–अत्यन्त सीधे स्वभावसे नहीं रहना चाहिये.

इस कारण कि वनमें जाकर देखो. सीधे वृक्ष काटे जाते हैं और टेढे खड़े रहते हैं ॥ १२ ॥

यत्रोदकंतत्रवसंतिहंसास्तथैवशुष्कंपरिवर्जयंति नहंसतुल्येननरेणभाव्यंपुनस्त्यजंतः पुनराश्रयन्ते: ॥१३ ॥

टीका—जहाँ जल रहताहै वहांही हंस बसते हैं, वैसेही सूखे सरको छोड देते हैं. नरको हंसके समान नहीं रहना चाहिये कि, वे बार बार छोड़ देते हैं और बार बार आश्रय लेते हैं ॥ १३ ॥

उपार्जितानांवित्तानांत्यागएवहिरक्षणम् ॥ तडागोदरसंस्थानांपरिस्रवइवांभसाम् ॥१४॥

टीका—अर्जित धनोंका व्यय करनाही रक्षा है. जैसे तडागके भीतरके जलका निकालना ॥ १४ ॥

यस्यार्थस्तस्यमित्राणियस्यार्थस्तस्यबांधवः ॥ यस्यार्थःसपुमांल्लोकेयस्यार्थसचजीवति।१५।

टीका—जिसको धन रहता है उसीके मित्र होते हैं जिसके पास अर्थ रहता है उसीके बन्धु होते हैं, जिसके धन रहता है वही पुरुष गिना जाता है और जिसके अर्थ है वही जीता है ॥ १५ ॥

स्वर्गस्थितानामिहजीवलोकेचत्वारिचिह्नानिवसंतिदेहे ॥ दानप्रसंगोमधुराचवाणीदेवार्चनंब्रा-

ह्मणतर्पणंच ॥ १६ ॥

टीका–संसारमें आनेपर स्वर्गवासियोंके शरीरमें चार चिन्ह रहते हैं. दानका स्वभाव, मीठा वचन, देवता की पूजा और ब्राह्मणको तृप्त करना अर्थात् जिन लोगोंमें दान आदि लक्षण रहैं उनको जानना चाहिये कि वे अपने पुण्यके प्रभावसे स्वर्गवासी मर्त्यलोकमें अवतार लिये हैं ॥ १६ ॥

अत्यन्तकोपःकटुकाचवाणीदरिद्रताचस्वजनेषुवैरं ॥ नीचप्रसंगःकुलहीनसेवाचिह्नानिदेहेनरकस्थितानाम् ॥ १७ ॥

टीका–अत्यंत क्रोध, कटु वचन, दरिद्रता, अपने जनोंमें बैर, नीचका संग कुलहीनकी सेवा ये चिन्ह नरकवासियोंके देहोंमें रहते हैं ॥ १७ ॥

गम्यतेयदिमृगेन्द्रमंदिरंलभ्यतेकरिकपोलमौक्तिकम् ॥ जंबुकालयगतेचप्राप्यतेवत्सपुच्छखरचर्मखण्डनम् ॥ १८ ॥

टीका–यदि, कोई सिंहके गुहामें जा पडे तो उस को हाथीके कपोलकी मोती मिलते है. और सियार के स्थानमें जानेपर बछवेकी पूंछ और गदहेके चमडे का टुकडा मिलता है ॥ १८ ॥

शुनःपुच्छमिवव्यर्थंजीवितंविद्ययाविना ॥
नगुह्यगोपनेशक्तंनचदंशानिवारणे ॥ १९ ॥

टीका—कुत्तेके पूंछके समान विद्याविना जीना व्यर्थ है. कुत्तेकी पूंछ गोप्यइन्द्रियको ढांप नहीं सकती है न मच्छड आदि जीवोंको उडा सकती है ॥ १६ ॥

वाचांशौचंचमनसःशौचमिन्द्रियनिग्रहः ॥
सर्वभूतदयाशौचमेतच्छौचंपरार्थिनाम् ॥२०॥

टीका—वचनकी शुद्धि, मनकी शुद्धि इन्द्रियोंका संयम सब जीव पर दया और पवित्रता ये परार्थियों की शुद्धि है ॥ २० ॥

पुष्पेगंधंतिलेतैलंकाष्ठेग्निंपयोसघृतम् ॥
इक्षौगुडंतथादेहेपश्यात्मानंविवेकतः ॥२१॥

टीका—फूलमें गन्ध, तिलमें तेल, काष्ठमें आग दूध में घी, ऊखमें गुड, जैसे वैसेही देहमें आत्माको विचारसे देखो ॥ २१ ॥

इति सप्तमोऽध्याय ॥ ७ ॥

---

## अथ अष्टमोऽध्यायः ८ ।

अधमाधनमिच्छन्तिधनंमानंचमध्यमाः ॥
उत्तमामानमिच्छन्तिमानोहिमहतांधनम् ॥१॥

टीका—अधम धनही चाहते हैं, मध्यम धन और मान, उत्तम मानही चाहतेहैं इस कारण कि महात्माओं का धन मान ही है ॥ १ ॥

इक्षुरापः पयोमूलंताम्बूलंफलमौषधम् ॥
भक्षयित्वापिकर्तव्याःस्नानदानादिकाःक्रियाः२

टीका-ऊष, जल, दूध, मूल, पान, फल, और औषध इन वस्तुओंके भोजन करनेपरभी स्नान दान आदि क्रिया करनी चाहिये ॥ २ ॥

दीपोभक्षयतेध्वांतंकज्जलंचप्रसूयते ॥ यदन्नं भक्ष्यतेनित्यंजायतेतादृशीप्रजा ॥ ३ ॥

टीका-दीप अन्धकारको खाय जाता है और काजल को जन्माता है, जैसा अन्न सदा खाता है वैसीही उसकी सन्तती होती है ॥ ३ ॥

वित्तंदेहिगुणान्वितेषुमतिमन्नान्यत्रदेहिकचित् प्राप्तंवारिनिधेर्जलंघनमुखेमाधुर्ययुक्तंसदा ॥ जीवान्स्थावरजंगमांश्च सकलान्संजीव्यभूमंडलं। भूयःपश्यतिदेवकोटिगुणितंगच्छंतमम्भोनिधम् ॥ ४ ॥

टीका-हे मतिमन् गुणियोंको धन दो औरोंको कभी मत दो समुद्रसे मेघके मुखमें प्राप्त होकर जल सदा मधुर होजाताहै. पृथ्वीपर चर अचर सब जीवोंको जिलाकर फिर देखो, वही जल कोटिगुणा होकर उसी समुद्रमें चला जाता है ॥ ४ ॥

चाडालानासहस्रैश्चसूरिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥
एकोहियवनःप्रोक्तोम्ननीचोयवनात्परः ॥ ५ ॥

टीका—तत्त्वदर्शियोंने कहा है कि, सहस्रचांडालोंके तुल्य एक यवन होता है और यवनसे नीच दूसरा कोई नहीं है ।' ५ ॥

तैलाभ्यंगेचिताधूमेमैथुनेक्षौरकर्मणि ॥ ताव द्भवतिचांडालोयावत्स्नानंसमाचरेत् ॥ ६ ॥

टीका—तेल लगानेपर, चिताके धूम लगनेपर, स्त्री प्रसंग करनेपर, वाल वनानेपर, तवतक चाण्डालही वना रहता हे जवतक स्नान नहीं करता है ॥ ६ ॥

अजीर्णेभेपजंवारिजीर्णेवारिवलप्रदम् ॥
भोजनेचामृतंवारिभोजनांतेविपप्रदम् ॥ ७ ॥

टीका—अपच होनेपर जल औषध है, पचजानेपर जल वलको देता है, भोजन के समय पानी अमृत के समान है, और भोजनके अन्तमें विषका फल देता है ॥ ७ ॥

हतंज्ञानंक्रियाहीनंहतश्चाज्ञानतोनरः ॥ हतंनि र्नायकंसैन्यंस्त्रियोनष्टाह्यभर्तृकाः ॥ ८ ॥

टीका—क्रियाके विना ज्ञान व्यर्थ है, अज्ञानसे नर मारा जाता है सेनापतिके विना सेना मारी जाती है और स्वामी हीन स्त्री नष्ट होजाती है॥ ८ ॥

वृद्धकालेमृताभार्याबंधुहस्तगतंधनम् ॥
भोजनंचपराधीनंतिस्रःपुंसांविडम्बनाः ॥ ९ ॥

टीका—बुढापेमें मरी स्त्री, बन्धुके हाथमें गया धन और दूसरेके आधीन भोजन येतीन पुरुषोंकी विडम्बना है अर्थात् दुखःदायक होते हैं ॥ ९ ॥

अग्निहोत्रंविनावेदानचदानंविनाक्रिया ॥
नभावेनविनासिद्धिस्तस्माद्भावोहिकारणम् ॥१०

टीका—अग्निहोत्रके बिना वेदका पढना व्यर्थ होता है दानके बिना यज्ञादिक क्रिया नहीं बनती, भावके बिना कोई सिद्धि नहीं होती इसहेतु प्रेमही सबका कारण है ॥ १० ॥

काष्ठपाषाणधातूनांकृत्वाभावेनसेवनम् ॥ श्रद्ध याचतथासिद्धिस्तस्यविष्णोःप्रसादतः ॥११॥

टीका—धातु काष्ठ पाखान भावसहित सेवन करना श्रद्धासैती भगवत् कृपासे जैसा भावहै तैसाही सिद्ध होता है ॥ ११ ॥

नदेवोविद्यतेकाष्ठेनपाषाणेनमृन्मये ॥
भावेहिविद्यतेदेवस्तस्माद्भावोहिकारणम् ॥१२॥

टीका—देवता काठमें नहीं है, न पाषाणमें है न मृत्तिकाकी मूर्तिमें है. निश्चय है कि देवता भावमें विद्यमान है, इसहेतु भावही सबका कारण है ॥१२॥

शांतितुल्यंतपोनास्तिनसंतोषात्परंसुखम् ॥
नतृष्णायाःपरोव्याधिर्नचधर्मोदयापरः ॥१३॥

टीका—शांती के समान दूसरा तप नहीं, न संतोप से परे सुख, न तृष्णा से दूसरी व्याधी है, न दयासे अधिक धर्म ॥ १३ ॥

क्रोधोवैवस्वतोराजातृष्णावैतरणीनदी ॥
विद्याकामदुघाधेनुःसंतोपोनन्दनंवनम्॥ १४ ॥

टीका—क्रोध यमराज है और तृष्णा वैतरणीनदी है, विद्या कामधेनु गाय है और सन्तोष इन्द्रकी वाटिका है ॥ १४ ॥

गुणोभूपयतेरूपंशीलंभूपयतेकुलम् ॥
सिद्धिर्भूपयेद्विद्यांभोगोभूपयतेधनम् ॥१५॥

टीका—गुण रूपको भूषित करता है, शील कुलको अलंकृत करता है, सिद्धि विद्याको भूषित करती है और भोग धनको भूषित करता है ॥ १५ ॥

निर्गुणस्यहतंरूपंदुःशीलस्यहतंकुलम् ॥ अ
सिद्धस्यहताविद्याअभोगेनहतंधनम् ॥ १६ ॥

टीका—निर्गुणकी सुंदरता व्यर्थ है, शीलहीनका कुल निंदित होता है, सिद्धिके विना विद्या व्यर्थ है भोग के विना धन व्यर्थ है ॥ १६ ॥

शुद्धंभूमिगतंतोयंशुद्धानारीपतिव्रता ॥
शुचिःक्षेमकरोराजासंतुष्टोब्राह्मणःशुचिः॥१७॥

टीका—भूमिगत जल पवित्र होता है, पतिव्रता स्त्री

पवित्र होती है कल्याण करनेवाला राजा पवित्र गिना जाता है, ब्राह्मण संतोषी शुद्ध होता है ॥ १७ ॥

असन्तुष्टाद्विजानष्टाःसंतुष्टाश्चमहीपतिः ॥
सलज्जागणिकानष्टानिर्लज्जाश्चकुलांगना:१८

टीका—असंतोषी ब्राह्मण निंदित गिनेजाते हैं और संतोषी राजा, सलज्जा वेश्या और लज्जाहीन कुल स्त्री निंदित गिनि जाती हैं ॥ १८ ॥

किंकुलेनविशालेनविद्याहीनेनदेहिनाम् ॥
दुष्कुलंचापिविदुपोदेवैरपिसुपूज्यते ॥ १९ ॥

टीका—विद्याहीन बडेकुलमे मनुष्योंको क्या लाभ है? विद्वान् का नीचभी कुल देवतोंसे पूजा जाता है॥१९॥

विद्वान्प्रशस्यतेलोकेविद्वान्सर्वत्रगोरवम् ॥
विद्ययालभतेसर्वंविद्यासर्वत्रपूज्यते ॥ ५० ॥

टीका—संसारमें विद्वान्ही प्रशंसित होता है विद्वान् ही सब स्थानोंमें आदर पाता है विद्याहीसे सब मिलता है विद्याही सब स्थानमें पूजित होती है ॥ २० ॥

रूपयौवनसंपन्नाविशालकुलसंभवाः ॥
विद्याहीनानशोभंतेनिर्गंधाइवकिंशुकाः ॥२१॥

टीका—सुंदर, तरुणतायुत और बडे कुलमें उत्पन्न भी विद्याहीन पुरुष ऐसे नहीं शोभते, जैसे विनागंध पलाश के फूल ॥ २१ ॥

मासभक्ष्याःसुरापानामुर्खाश्चाक्षरवर्जिताः ॥
पशुभिःपुरुषाकारैर्भाराक्रांतास्तिमेदिनी ॥२२॥

टीका—मांस के भक्षण और मदिरापान करनेवाले, निरक्षर, और मूर्ख इन पुरुषाकार पशुओंके भारसे पृथिवी पीडित रहती है ॥ २२ ॥

अन्नहीनोदहेद्राष्ट्रंमंत्रहीनश्चऋत्विजः ॥
यजमानंदानहीनोनास्तियज्ञसमोरिपुः ॥२३॥

टीका—यज्ञ यदि अन्नहीन हो तो, राज्यको मंत्रहीन हो तो ऋत्विजोंका दानहीन हो तो यजमानको जलाता है, इस कारण यज्ञके समान कोईभी शत्रु नहीं है ॥ २३ ॥

इतिवृद्धचाणक्ये अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

———:×O+:———

## नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

मुक्तिमिच्छसिचेत्तातविषयान्विषवत्त्यज ॥
क्षमार्जवदयाशौचंसत्यंपीयूषवत्पिब ॥ १ ॥

टीका—हेभाई, यदि मुक्ति चाहते हो तो विषयों को विषके समान छोड दो ! सहनशीलता, सरलता, दया पवित्रता और सचाईको अमृतकीनाईं पिओ ॥१॥

परस्परस्यमर्माणियेभाषंतेनराधमाः ॥ तएव
विलयंयांतिवल्मीकोदरसर्पवत् ॥ २ ॥

टीका—जो नराधम परस्पर अंतरात्मके दुःखदायक वचनको भाषण करते हैं वे निश्चयकरिके नष्ट होजाते हैं. जैसे बिमोटमें पड़कर सांप ॥ २ ॥

गंधःसुवर्णेफलमिक्षुदंडेनाकारिपुष्पंखलुचंदनस्य ॥ विद्वान्धनीभूपतिर्दीर्घजीवीधातुः पुराकोऽपिनबुद्धिदोऽभूत् ॥ ३ ॥

टीका—सुवर्णमें गन्ध, ऊखमें फल, चंदनमें फूल, विद्वान् धनी और राजा चिरजीवी न किया इससे निश्चय है कि, विधाताके पहिले कोई बुद्धिदाता न था ॥ ३ ॥

सर्वौषधीनाममृताप्रधानासर्वेषुसौख्येष्वशनंप्रधानम् ॥ सर्वेन्द्रियाणांनयनंप्रधानंसर्वेषुगात्रेषुशिरःप्रधानम् ॥ ४ ॥

टीका—सब ओषधियोंमें गुरच गिलोह प्रधान है, सब सुखोंमें भोजन श्रेष्ठ है; सब इन्द्रियोंमें आंख उत्तम है; सब अंगोंमें शिर श्रेष्ठ है ॥ ४ ॥

दूतोनसंचरतिखेनचलेच्चवार्तापूर्वंनजल्पितमिदंनचसंगमोस्ति ॥ व्योम्निस्थितंरविशशिग्रहणंप्रशस्तंजानातियोद्विजवरःसकथंनविद्वान् ॥५॥

टीका—आकाशमें दूत नहीं जासक्ता, न वार्ताकी चर्चा चलसक्ती न पहिलेहीसे किसीने कहरक्खा

है और न किसीसे संगम होसक्ता; ऐसी दशामें आकाशमें स्थित सूर्यचन्द्रके ग्रहणको जो द्विजवर स्पष्ट जानता है वह कैसे विद्वान् नहीं है ॥ ५ ॥

विद्यार्थीसेवकःपांथःक्षुधार्तोभयकातरः ॥ भांडारीप्रतिहारीचसप्तसुप्तान्प्रबोधयेत् ॥ ६ ॥

टीका—विद्यार्थी, सेवक, पथिक भूखसे पीडित, भयसे कातर, भांडारी और द्वारपाल ये सात यदि सोतेहों तौ जगादेना चाहिये ॥ ६ ॥

अहिंनृपंचशार्दूलंवृटिंचबालकंतथा ॥ परश्वानंचमूर्खंचसप्तसुप्तान्नबोधयेत् ॥ ७ ॥

टीका—सांप, राजा, व्याघ्र, बर्रै, वैसेही बालक, दूसरेका कुत्ता और मूर्ख ये सात सोते हों तौ नहीं जगाना चाहिये ॥ ७ ॥

अर्थाधीताश्चयैर्वेदास्तथाशूद्रान्नभोजिनः ॥ तेद्विजाःकिंकरिष्यंतिनिर्विषाइवपन्नगाः ॥८॥

टीका—जिन्होंने धनके अर्थ वेदको पढा, वैसेही जो शूद्रका अन्न भोजन करतेहैं वे ब्राह्मण विषहीन सर्पके समान क्या करसक्ते हैं ॥ ८ ॥

यस्मिन्रुष्टेभयंनास्तितुष्टेनैवधनागमः ॥ निग्रहोऽनुग्रहोनास्तिसरुष्टःकिंकरिष्यति ।९।

टीका–जिसके क्रुध होनेपर न भय है, प्रसन्न होनेपर न धनका लाभ, न दंड वा अनुग्रह होसका है वह रुष्ट होकर क्या करेगा ॥ ९ ॥

निर्विषेणापिसर्पेणकर्तव्यामहतीफणा ॥
विषमस्तुनचाप्यस्तुघटाटोपोभयंकरः ॥१०॥

टीका–विषहीनभी सांपको अपनी फण बढाना चाहिये. इस कारण कि, विष हो वा न हो आडंबर भयजनक होता है ॥ १० ॥

प्रातर्द्यूतप्रसंगेनमध्याह्नेस्त्रीप्रसंगतः ॥
रात्रौचोरप्रसंगेनकालोगच्छतिधीमताम् ।११।

टीका–प्रातःकालमें जुआड़ियोंकी कथासे अर्थात महाभारतसे मध्यान्हमें स्त्रीके प्रसंगसे अर्थात् रामायण से, रात्रीमें चोरकी वार्तासे अर्थात् भागवतसे, बुद्धिमानोंका समय बीतता है. ॥ तात्पर्य यह कि, महाभारतके सुननेसे यह निश्चय होजाता है कि, जुआ, कलह और छलका घर है. इसलोक और परलोकमें उपकार करनेवाले कामोंको महाभारतमें लिखीहुई रीतियोंसे करनेपर उन कामोंका पूरा फल होताहै; इस कारण बुद्धिमान् लोग प्रातःकालहीमें माहाभारतको सुनते हैं. जिससे दिनभर उसीरीतीसे काम करते जांय. रामायण सुननेसे स्पष्टउदाहरण मिलता है कि, स्त्रीके वश होनेसे अत्यन्त दुःख होता है और परस्त्रीपर दृष्टि देनेसे पुत्र कलत्र जड़

मूलके साथ पुरुषका नाश होजाता है; इसहेतु मध्यान्हमें अच्छे लोग रामायणको सुनतेहैं प्रायःरात्रि में लोग इन्द्रियोंके वश होजाते हैं और इन्द्रियोंका यह स्वभाव है कि, मनको अपने अपने विषयोंमें लगाकर जीवको विषयोंमें लगादेती हैं; इसीहेतुसे इन्द्रियोंको आत्माप्रहारीभी कहते हैं और जोलोग रात को भागवत सुनतेहैं वे कृष्णके चरित्रको स्मरण करके इन्द्रियोंके वश नहीं होते. क्योंकि सोलह हजार से अधिकस्त्रियोंके रहतेभीश्रीकृष्णचन्द्र इन्द्रियोंकेवश न हुए और इन्द्रियोंके संयमकी रीतिभी जानजातेहैं.।११।

स्वहस्तग्रथितामालास्वहस्तघृष्टचन्दनम् ॥
स्वहस्तलिखितंस्तोत्रंशक्रस्यापिश्रियंहरेत्।१२।

टीका–अपने हाथसे गुथी माला, अपने हाथसे घिसा चंदन, अपने हाथसे लिखा स्तोत्र ये इन्द्रकी लक्ष्मीको भी हरलेते हैं. ॥ १२ ॥

इक्षुदंडास्तिलाःशूद्राःकांताहेमचमेदिनी ॥
चंदनंदधिताम्बूलंमर्दनंगुणवर्धनम् ॥ १३ ॥

टीका–ऊष, तिल, शूद्र, कांता, सोना, पृथ्वी, चन्दन, दही और पान इनका मर्दन गुणवर्द्धनहै॥१३॥

दरिद्रताधीरतयाविराजतेकुवस्त्रताशुभ्रतयाविराजते। कदन्नताचोष्णतयाविराजते कुरूपता शीलतयाविराजते ॥ १४ ॥

टीका–दरिद्रताभी धीरतासे शोभती है स्वच्छतासे कुवस्त्र सुंदर जानपड़ता है. कुअन्नभी उष्णतासे मीठा लगताहै कुरूपताभी सुशीलता होतो शोभा देतीहै॥१४

॥ इति नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

——:+:——

## अथ वृद्धचाणक्यस्योत्तरार्द्धम् ।

## दशमोऽध्यायः १०

धनहीनोनहीनश्चधनिकःससुनिश्चयः ॥
विद्यारत्नेनहीनोयःसहीनःसर्ववस्तुषु ॥ १ ॥

धनहीन हीन नहीं गिना जाता, निश्चय है कि, वह धनी ही है. विद्यारत्नसे जो हीन है वह सब वस्तुओं में हीन है ॥ १ ॥

दृष्टिपूतंन्यसेत्पादंवस्त्रपूतंपिवेज्जलम् ॥
शास्त्रपूतंवदेद्वाक्यंमनःपूतंसमाचरेत् ॥ २ ॥

टीका--दृष्टीसे शोधकर पांव रखना उचित है, वस्त्र से शुद्ध कर जल पीवे, शास्त्रसे शुद्धकर वाक्य बोले और मन से सोच कर कार्य करना चाहिये ॥ २ ॥

सुखार्थीचेत्त्यजेद्विद्यांविद्यार्थीचेत्त्यजेत्सुखं ॥
सुखार्थिनःकुतोविद्यासुखंविद्यार्थिनःकुतः।३।

टीका--यदि सुख चाहे तो विद्याको छोड़दे, यदि

विद्या चाहे तो सुख का त्याग करै. सुखार्थीको विद्या कैसे होगी और विद्यार्थीको सुख कैसे होगा ॥ ३ ॥

कवयःकिंनपश्यंतिकिंनकुर्वंतियोषितः ॥
मद्यपाःकिंनजल्पंतिकिंनखादंतिवायसाः॥४॥

टीका--कवि क्या नहीं देखते, स्त्री क्या नहीं कर सक्ती, मद्यपी क्या नहीं बकते और कौवे क्या नहीं खाते ॥ ४ ॥

रंकंकरोतिराजानंराजानंरंकमेवच ॥
धनिनंनिर्धनंचैवनिर्धनंधनिनंविधिः ॥ ५ ॥

टीका--निश्चय है कि विधि रंकको राजा, राजा को रंक धनीको निर्धन और निर्धनको धनी कर देता है ॥ ५ ॥

लुब्धानांयाचकःशत्रुर्मूर्खाणांबोधकोरिपुः ॥
जारस्त्रीणांपतिःशत्रुश्चोराणांचंद्रमारिपुः॥६॥

टीका--लोभियोंको याचक और मूर्खोंको समझाने वाला और पुंश्चलीस्त्रियोंकोपति और चोरोंको चन्द्रमा शत्रु है. ॥ ६ ॥

येषांनविद्यानतपो नदानंनचापिशीलंनगुणोन धर्मः॥ तेमृत्युलोकेभुविभारभूतामनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥ ७ ॥

टीका--जिन लोगों में न विद्या है, न तप है, न दान है न शील है न गुण है और न धर्म है वे संसार में पृथ्वीपर भार रूप होकर मनुष्यरूपसे मृग वत फिर रहे हैं ॥ ७ ॥

अंतःसारविहीनानामुपदेशोनजायते ॥
मलयाचलसंसर्गान्नवेणुश्चंदनायते ॥ ८ ॥

टीका--गंभीरता विहीन पुरुषोंको शिक्षा देना सार्थक नहीं होता. मलयाचलके संगमे बांस चन्दन नहीं होजाता ॥ ८ ॥

यस्यनास्तिस्वयंप्रज्ञाशास्त्रंतस्यकरोतिकिं ॥
लोचनाभ्यांविहीनस्यदर्पणंकिंकरिष्यति॥९॥

टीका--जिसकी स्वाभाविक बुद्धि नहीं है उसको शास्त्र क्या कर सक्ता है आंखोसे हीनको दर्पण क्या करेगा. ॥ ९ ॥

दुर्जनंसज्जनंकर्त्तुमुपायोनहिभूतले ॥
अपानंशतधाधौतंनश्रेष्ठमिन्द्रियंभवेत् ॥१०॥

टीका--दुर्जनको सज्जन करनेके लिये पृथ्वीतलमें कोई उपाय नहीं हैं. मलका त्याग करनेवाली इन्द्रिय सौबारभी धोई जाय तोभी श्रेष्ठ इन्द्रिय न होगी.॥ १०॥

आप्तद्वेषाद्भवेन्मृत्युःपरद्वेषाद्धनक्षयः ॥
राजद्वेषाद्भवेन्नाशोब्रह्मद्वेषात्कुलक्षयः ॥११॥

टीका--बड़ोंके द्वेषसे मृत्युहोती है शत्रुसे विरोध करने से धनका क्षय है, राजाके द्वेष से नाश और ब्राह्मणके द्वेषसे कुल का क्षय होता है ॥ ११ ॥

वरंवनेव्याघ्रगजेंद्रसेवितेद्रुमालयेपत्रफलाबुसेवनम् ॥ तृणेषुशय्याशतजीर्णवल्कलंनबंधु मध्येधनहीनजीवनम् ॥ १२ ॥

टीका--बनमें बाघ और बड़े २ हाथियोंसे सेवित वृक्ष के नीचेके पत्ते फल खाना, वा जल का पीना, घास पर सोना, सो टुकड़ेके बकलोंको पहिनना ये श्रेष्ठ हैं; पर बंधुओंके मध्य में धनहीन का जीना श्रेष्ठ नहीं है. ॥ १२ ॥

विप्रोवृक्षस्तस्यमूलंचसंध्यावेदाः शाखाधर्मकर्माणिपत्रम् ॥ तस्मान्मूलंयत्ततोरक्षणीयंछिन्ने मूलेनैवशाखानपत्रम् ॥ १३ ॥

टीका-- ब्राह्मण वृक्ष है, उसकी जड़ संध्या है, वेद शाखा है, और धर्मके कर्म पत्ते हैं, इसकारण प्रयत्नकर के जड़की रक्षा करनी चाहिये. जड़ कटजानेपर न शाखा रहेगी और न पत्ते ॥ १३ ॥

माताचकमलादेवीपितादेवोजनार्दनः ॥ बांधवाविष्णुभक्ताश्चस्वदेशोभुवनत्रयम् ।१४।

टीका--जिसकी लक्ष्मी माता है और विष्णु भगवान्

पिता हैं और विष्णुके भक्त बांधव हैं उसको तीनों लोक स्वदेशहीहैं ॥ १४ ॥

एकवृक्षसमारूढानानावर्णाविहंगमाः ॥
प्रभातेदिक्षुदशसुयांतिकापरिवेदना ॥ १५ ॥

टीका--नाना प्रकारके पखेरू एकवृक्षपर बैठते हैं प्रभात समय दश दिशा में होजाते हैं उसमें क्या सोच है ॥ १५ ॥

बुद्धिर्यस्यबलंतस्यनिर्बुद्धेश्चकुतोबलम् ॥
वनेसिंहोमदोन्मत्तोजंबुकेननिपातितः ॥१६॥

टीका--जिसकोबुद्धि है उसीको बल है निर्बुद्धिको बल कहांसे होगा देखो बनमें मदसे उन्मत सिंह सियारसे मारागया ॥ १६ ॥

काचिंताममजीवने यदिहरिर्विश्वंभरोगीयते । नोचेदर्भकजीवनायजननीस्तन्यं कथंनिःसरेत् ॥ इत्यालोचमुहुर्मुहुर्यदुपतेलक्ष्मीपतेकेवलम् । त्वत्पादांबुजसेवनेनसततंकालोमया नीयते ॥ १७ ॥

टीका--मेरे जीवनेमें क्या चिंता है यदि हरि विश्वका पालनेवाला कहलाता है, ऐसा न होतो बच्चे के जीनेके हेतु माताके स्तनमें दूध कैसे बनाते ? इस

को बार २ विचार करके हेयदुपति ! हेलक्ष्मी पति !! सदा केवल आपके चरणकमलके सेवासे मैं समयको बिताताहूं ॥ १७ ॥

गीर्वाणवाणीषुविशिष्टबुद्धिस्तथापिभाषांतरलोलुपोहम् ॥ यथासुधायाममृतेचसेवितेस्वर्गांगनानामधरासवेरुचिः ॥ १८ ॥

टीका—यद्यपि संस्कृतही भाषामें विशेष ज्ञान है तथापि दूसरी भाषाकाभी मैं लोभी हूं जैसे अमृतके रहतेभी देवताओंकी इच्छा स्वर्गकी स्त्रियों के ओष्ठ के आसवमें रहती है ॥ १८ ॥

अन्नाद्दशगुणंपिष्टंपिष्टाद्दशगुणंपयः ॥ पयसोऽष्टगुणंमांसंमांसाद्दशगुणंघृतम् ॥१९॥

टीका—चावलसे दशगुणा पिसान (चूनमें) गुण है. पिसानसे दशगुणा दूधमें, दूधसे अठगुणा मांसमें, मांससे दशगुणा घी में ॥ १९ ॥

शाकेनरोगावर्धंतेपयसावर्धतेतनुः ॥ घृतेनवर्धतेवीर्यंमांसान्मांसंप्रवर्धते ॥ २० ॥

टीका—सागसे रोग, दूधसे शरीर, घीसे वीर्य, और मांससे मांस, बढता है ॥ २० ॥

इति वृद्धचाणक्ये दशमोऽध्याय ॥ १० ॥

## अथैकादशोऽध्यायः ११

दातृत्वंप्रियवक्तृत्वंधीरत्वमुचितज्ञता ॥
अभ्यासेननलभ्यन्तेचत्वारःसहजागुणाः।१।

टीका—उदारता, प्रिय बोलना, धीरता और उचित का ज्ञान ये अभ्याससे नहीं मिलते, ये चारों स्वभाविक गुण हैं ॥ १ ॥

आत्मवर्गंपरित्यज्यपरवर्गंसमाश्रयेत् ॥
स्वयमेवलयंयातियथाराज्यमन्यधर्मतः ॥२॥

टीका—जो अपनी मण्डलीको छोड परके वर्ग का आश्रय लेता है वह आपही लयको प्राप्त होजाता है जैसे राजाके राज्य अधर्मसे ॥ २ ॥

हस्तीस्थूलतनुःसचांकुशवशःकिंहस्तिमात्रोंऽकुशोदीपेप्रज्वलितेप्रणश्यतितमः किंदीपमात्रं तमः ॥ वज्रेणापिहताःपतन्तिगिरयःकिंवज्रमात्रन्नगाः तेजोयस्यविराजतेसबलवान्स्थूलेषुकःप्रत्ययः ॥ ३ ॥

टीका—हाथीका स्थूल शरीर है वहभी अंकुशके वश रहता है, तो क्या हस्तीके समान अंकुश है? दीपके जलनेपर अंधकार आपही नष्ट होजाता है, तो क्या दीपके तुल्य तम है? बिजलीके मारे पर्वत गिरजाते

हैं तो क्या बिजली पर्वतके समान है? जिसमें तेज विराजमान रहता है वह बलवान् गिनाजाता है. मोटेका कौन विश्वास है. ॥ ३ ॥

**कलौदशसहस्राणिहरिस्त्यजतिमेदिनीम् ॥**
**तदर्द्धंजाह्नवीतोयंतदर्द्धंग्रामदेवताः ॥ ४ ॥**

टीका–कलियुगमें दशसहस्रवर्षके बीतनेपर विष्णु पृथ्वीको छोडदेते हैं. उसके आधेपर गंगाजी जलको, तिसके आधेके बीतनेपर ग्रामदेवता ग्रामको ॥ ४ ॥

**गृहासक्तस्यनोविद्या नोदयामांसभोजनः ॥**
**द्रव्यलुब्धस्यनोसत्यं स्त्रैणस्यनपवित्रता ॥५॥**

टीका–गृहमें आसक्त पुरुषोंको विद्या,मांसके आहारी को दया, द्रव्यलोभीको सत्यता,और व्यभिचारी को पवित्रता, नहीं होती है ॥ ५ ॥

**नदुर्जनः साधुदशामुपैतिवहुप्रकारैरपिशिक्ष्यमाणः॥ आमूलसिक्तःपयसाघृतेननर्निबवृक्षा मधुरत्वमेति ॥ ६ ॥**

टीका–निश्चय है कि, दुर्जन अनेक प्रकारसे सिखलाथाभी जाय, पर उसमें साधूता नहीं आती दूध और घीसे पालोपर्यंत नींबका वृक्ष सींचा जाय पर उसमें मधुरता नहीं आती ॥ ६ ॥

अन्तर्गतमलोदुष्टस्तीर्थस्नानशतैरपि ॥
नशुद्ध्यतितथाभांडंसुरायादाहितंचयत् ॥ ७ ॥

टीका-जिसके हृदयमें पाप है वही दुष्ट है; वह तीर्थमें सौवार स्नानसेभी शुद्ध नहीं होता, जैसे मदिराका पात्र जलायाभी जाय तौभी शुद्ध नहीं होता. ॥ ७ ॥

नवेत्तियोयस्यगुणप्रकर्षंसतंसदानिन्दतिनात्र चित्रम् ॥ यथाकिरातीकरिकुंभलब्धांमुक्तांपरि त्यज्यविभर्तिगुंजाम् ॥ ८ ॥

टीका-जो जिसके गुणकी प्रकर्षता नहीं जानता वह निरंतर उसकी निंदा करता है. जैसे भिल्लिनी हाथीके मस्तकके मोतीको छोड़ घुंघुचीको पहिनती है ॥ ८ ॥

येतुसंवत्सरंपूर्णंनित्यंमौनेनभुंजते ॥
युगकोटिसहस्रंतैपूज्यंतेस्वर्गविष्टपे ॥ ९ ॥

टीका-जो वर्षभर नित्य चुपचाप भोजन करता है वह सहस्रकोटि युगलों स्वर्गलोकमें पूजा जाता है॥९॥

कामक्रोधौतथालोभंस्वादुशृंगारकौतुके ॥
अतिनिद्रातिसेवेचविद्यार्थीह्यष्टवर्जयेत् ॥ १० ॥

टीका-काम, क्रोध, लोभ, मीठी वस्तु, शृंगार, खेल अति निद्रा और अतिसेवा इन आठोंको विद्यार्थी छोडदेवे ॥ १० ॥

अकृष्टफलमूलानिवनवासरतिः सदा ॥
कुरुतेऽहरहःश्राद्धमृषिर्विप्रःसउच्यते ॥११॥

टीका–विना जोती भूमिसे उत्पन्न फल वा मूलको खाकर सदा बनवास करता हो और प्रतिदिन श्राद्ध करे ऐसा ब्राह्मण ऋषि कहलाता है ॥ ११ ॥

एकाहारेणसंतुष्टःषट्कर्मनिरतःसदा ॥
ऋतुकालाभिगामीचसविप्रोद्विजउच्यते ।१२।

टीका–एकसमयके भोजनसे संतुष्ट रहकर पढना, पढाना, यज्ञ करना कराना,दान देना और लेना इन छःकर्मोंमें सदा रत हो और ऋतुकाल में स्त्रीका संग करै तो ऐसे ब्राह्मण को द्विज कहते हैं. ॥ १२ ॥

लौकिकेकर्मणिरतःपशूनांपरिपालकः ॥
वाणिज्यकृषिकर्माथःसविप्रोवैश्यउच्यते १३

टीका–संसारिक कर्ममें रत हो और पशुओंका पालन, बनियाई और खेती करनेवाला हो वह विप्र वैश्य कहलाता है ॥ १३ ॥

लाक्षादितैलनीलीनांकौसुंभमधुसर्पिषां ॥
विक्रेतामद्यमांसानांसविप्रःशूद्रउच्यते ॥१४॥

टीका–लाख आदि पदार्थ, तेल नीली कुसुम, मधु घी, मद्य, और मांस जो इन का वेचनेवाला वह ब्राह्मण शूद्र कहाजाता है ॥ १४ ॥

परकार्यविहंताचदाम्भिकःस्वार्थसाधकः ॥
छलीद्वेषीमृदुःक्रूरोविप्रोमार्जारउच्यते ॥१५॥

टीका—दूसरे के कामका बिगाडनेवाला, दम्भी, अपने ही अर्थका साधनेवाला, छली, द्वेषी, ऊपर मृदु और अन्तःकरणमें क्रूरहो, तो वह ब्राह्मण बिलार कहा-जाता है ॥ १५ ॥

वापीकूपतडागानामारामसुरवेश्मनाम् ॥
उच्छेदनेनिराशंकःसविप्रोम्लेच्छउच्यते।१६।

टीका—बावड़ी, कुंआ, तलाव, बाटिका, देवालय, इसके उच्छेद करने में जो निडर हो वह ब्राह्मण म्लेच्छ कहाजाता है ॥ १६ ॥

देवद्रव्यंगुरुद्रव्यंपरदाराभिमर्शनम् ॥
निर्वाहःसर्वभूतेषुविप्रश्चांडालउच्यते ॥ १७ ॥

टीका—देवताका द्रव्य और गुरूका द्रव्य जो हरता है और परस्त्रीसे संग करता है और सब प्राणियोंमें निर्वाह करलेता है वह विप्र चांडाल कहलाता है॥१७॥

देयंभोज्यधनंधनंसुकृतिभिर्नोसंचयस्तस्यवै ।
श्रीकर्णस्यवलेश्चविक्रमपतेरद्यापिकीर्तिःस्थिता ॥ अस्माकंमधुदानभोगरहितंनष्टंचिरात्संचितं । निर्वाणादितिनैजपादयुगलंघर्षंत्यहोमक्षिकाः ॥ १८ ॥

टीका—सुकृतियोंको चाहिये कि, भोगयोग धनको और द्रव्यको देवें कभी न संचे. कर्ण, बलि, विक्रमादित्य इनराजाओं की कीर्ति इस समयपर्यन्त वर्तमान है. दान भोगसे रहित बहुत दिनसे संचित हमारे लोगोंका मधु नष्ट होगया. निश्चय है कि, मधु मखियां मधुके नाश होने के कारण दोनों पाओंको घिसा करती हैं ॥ १८ ॥

॥ इति वृद्धचाणक्ये एकादशोऽध्याय ॥

---

## अथ द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

सानंदंसदनं सुतास्तुसुधियःकांताप्रियालापिनी । इच्छापूर्तिधनंस्वयोषितिरतिःस्वाज्ञापराः सेवकाः॥ आतिथ्यँशिवपूजनंप्रतिदिनंमिष्टान्न पानंगृहे । साधोःसंगमुपासतेचसततंधन्यो गृहस्थाश्रमः ॥ १ ॥

टीका—यदि आनंदयुक्त घर मिले और लडके पंडित हों स्त्री मधुरभाषिणी हो, इच्छाके अनुसार धन हो अपनहीं स्त्री में रति हो, आज्ञापालक सेवक मिलें, आतिथिकी सेवा और शिवकी पूजा हो प्रतिदिन गृह में मीठा अन्न और जल मिले सर्वदा साधूके सँग की उपासना, यह गृहस्थाश्रमही धन्य है ॥ १ ॥

आर्तेषुविप्रेषुदयान्वितश्चयच्छूद्धयास्वल्पमुपैति

दानम् ॥ अनंतपारंसमुपैतिराजन्यद्दीयतेतन्न लभेद्द्विजेभ्यः ॥ २ ॥

टीका—जो दयावान् पुरुष आर्त ब्राह्मणोंको श्रद्धासे थोड़ाभी दान देताहै उस पुरुषको अनन्त होकर वह मिलता है. जो दियाजाता है वह ब्राह्मणोंसे नहीं मिलता है ॥ २ ॥

दाक्षिण्यंस्वजनेदयापरजने शाठ्यं सदादुर्जने, प्रीतिः साधुजनेस्मयः खलजनेविद्वज्जनेचार्जवम् ॥ शौर्यंशत्रुजने क्षमागुरुजनेनारीजने धूर्तता, इत्थंयेपुरुषाः कलासुकुशलास्तेष्वेव लोकस्थितिः ॥ ३ ॥

टीका—अपने जनमें दक्षता, दूसरे जनमें दया दुर्जन में सदा दुष्टता, साधुजनमें प्रीति, खलमें अभिमान, विद्वानोंमें सरलता, शत्रुजनमें शूरता, बड़ेलोगोंके विषयमें क्षमा, स्त्रीसे कामपडनेपर धूर्तता, इस प्रकार से जो लोग कलामें कुशल होते हैं उन्हींमें लोगकी मर्यादा रहती है ॥ ३ ॥

हस्तौदानविवर्जितौश्रुतिपुटौसारस्वतद्रोहिणौ नेत्रेसाधुविलोकनेनरहितेपादौनतीर्थंगतौ ॥ अन्यायार्जितवित्तपूर्णमुदरंवर्गेणतुंगंशिरो.रेरे जम्बुकमुंचमुंचसहसानीचंसुनिंद्यंवपुः ॥ ४ ॥

टीका—हाथ दान रहित है, कान वेदशास्त्रके विरोधी हैं, नेत्रोंने साधुका दर्शन नहीं किया, पांवने तीर्थगमन नहीं किया, अन्यायसे अर्जित धनसे उदर भरा है और गर्वसे शिर ऊंचा होरहा है. रे रे शियार ऐसे नीच निंद्य शरीरको शीघ्र छोड ॥ ४ ॥

येशांश्रीमद्यशोदासुतपदकमले नास्तिभक्ति र्नराणां, येषांमाभीरकन्याप्रियगुणकथनेनानु रक्तारसंज्ञा ॥ येशांश्रीकृष्णलीलाललितरसं कथासादरौनैवकर्णौ, धिक्तान् धिक्तान् धिगेतान्कथयतिसततंकीर्तनस्थोमृदंगः॥५॥

टीका—श्रीयशोदासुतके पदकमलमें जिनलोगोंकी भक्ति नहीं रहती, जिनलोगोंकी जीभ अहीरकी कन्याओंके प्रियके अर्थात् श्रीकृष्णके गुणगानमें प्रीति नहीं रखती, और श्रीकृष्णजीकी लीलाकी ललित-कथाका आदर जिनके कान नहीं करते उनलोगोंको धिक् है ऐसा कीर्तनका मृदंग सदा कहता है ॥ ५ ॥

पत्रंनैवयदाकरीरविटपेदोषोवसंतस्यकिंनोलू कोप्यवलोकतेयदिदिवासूर्यस्यकिंदूषणं ॥ वर्षानैवपतंतुचातकमुखेमेघस्यकिंदूषणं,यत्पूर्वं विधिनाललाटलिखितंतन्मार्जितुंकःक्षमः।६।

टीका—यदि करीलके वृक्षमें पत्ते नहीं होते तो बसंत

का क्या दोष है? यदि उलूक दिनमें नहीं देखता तो सूर्य्यका क्या दोष है? वर्षा चातकके मुखमें नहीं पडती इसमें मेघका क्या अपराध है? पहिलेही ब्रह्मा ने जो कुछ ललाटमें लिख रक्खा है उसे मिटानेको कौन समर्थ है? ॥ ६ ॥

सत्संगाद्भवतिहिसाधुताखलानां साधूनांनहि-
खलसंगतःखलात्वम्॥आमोदंकुसुमभवंमृदेव
धत्तेमृद्गंधंनहिकुसुमानिधारयन्ति ॥ ७ ॥

टीका—निश्चय है कि, अच्छेके संगसे दुर्जनों में साधुता आजाती है परन्तु साधुओंमें दुष्टोंकी संगति से असाधुता नहीं आती फूलके गंधको मट्टी लेलेती है पर मट्टीके गंधको फूल कभी नहीं धारण करते॥७॥

साधूनांदर्शनंपुण्यंतीर्थभूताहिसाधवः ॥
कालेनफलतेतीर्थंसद्यः साधुसमागमः ॥ ८ ॥

टीका—साधुओंका दर्शनहीं पुण्य है इसकारण कि, साधु तीर्थरूप है. समयसे तीर्थ फल देता है, साधुओं का संग शीघ्रही काम करदेता है ॥ ८ ॥

विप्रास्मिन्नगरे महान्कथयकस्तालद्रुमाणां गणः । कोदातारजकोददातिवसनंप्रातर्गृहीत्वानिशि ॥ कोदक्षःपरवित्तदारहरणेसर्वोपि दक्षोजनःकस्माज्जीवसिहेसखेविषकृमिन्यायेनजीवाम्यहम् ॥ ९ ॥

टीका—हे विप्र! इस नगरमें कौन बडा है ? ताडके पेडोंका समुदाय, दाता कौन है ? धोबी प्रातःकाल वस्त्रलेता है रात्रिमें देदेता है, चतुर कौन है? दूसरे के धन और स्त्रीके हरणमें सबही कुशल हैं,तो ऐसे नगरमें आप कैसे जीते हो?हेमित्र!विषका कीडा विषही में जीता है वैसेही मैंभी जीताहूं ॥ ९ ॥

**नविप्रपादोदककर्दमानिनवेदशास्त्रध्वनिगर्जितानि॥ स्वाहास्वधाकारविवर्जितानिश्मशानतुल्यानिगृहाणितानि ॥ १० ॥**

टीका—जिनघरोंमें ब्राह्मणके पावोंके जलसे कीचड़ न भया हो और न वेदशास्त्रके शब्दकी गर्जना, और जो गृह स्वाहा स्वधासे रहित हो उनको श्मशानके समान समझना चाहिये ॥ १० ॥

**सत्यंमातापिताज्ञानं धर्मोभ्रातादयासखा ॥ शांतिः पत्नीक्षमापुत्रःषडेतेममबांधवाः ॥११॥**

टीका—सत्य मेरी माता है, और ज्ञान पिता, धर्म मेरा भाई है, औ, दया मित्र, शांती मेरी स्त्री है, और क्षमा पुत्र, येही छः मेरे बन्धु हैं ॥ किसी संसारी पुरुषने ज्ञानीको देखकर चकितहो पूछा कि, संसार में माता, पिता, भाई, मित्र, स्त्री, पुत्र, ये जितनाही अच्छेसे अच्छे हों उतनाही संसार से आनंद होता है तुझको परम आनंदमें मग्न देखताहूं तो तुझकोभी

कहीं न कहीं कोई न कोई उनमेंसे होगा; ज्ञानीने समझा कि, जिस दशाको देखकर यह चकित है वह दशा क्या सांसारिक कुटुम्बोंसे होसक्ती हैं. इस कारण जिनसे मुझे परम आनंद होता है उन्हीको इससे कहूं कदाचित् यहभी इनको स्वीकार करे ॥ ११ ॥

अनित्यानिशरीराणिविभवोनैमशाश्वतः ॥
नित्यंसन्निहितोमृत्युःकर्तव्योधर्मसंग्रहः॥१२॥

टीका–शरीर अनित्य है, विभवभी सदा नहीं रहता मृत्यु सदा निकटही रहती है; इसकारण धर्मका संग्रह करना चाहिये ॥ १२ ॥

निमंत्रणोत्सवाविप्रागावोनवतृणोत्सवाः ॥
पत्युत्साहयुताभार्याअहंकृष्णरणोत्सवः॥१३॥

टीका–निमंत्रण ब्राह्मणोंका उत्सव है, और नवीन घास गय्योंका उत्सव है, पतिके उत्साहसे स्त्रियोंको उत्साह होताहै, हेकृष्ण! मुझको रणही उत्सवहै॥१३॥

मातृवत्परदारांश्चपरद्रव्याणिलोष्टवत् ॥
आत्मवत्सर्वभूतानियःपश्यतिसपश्यति॥१४॥

टीका–दूसरेकी स्त्रीको माताके समान, दूसरेके द्रव्यको पत्थर कंकर समान. और अपने समान सब प्राणियोंको जो देखता है वही देखता है ॥ १४ ॥

धर्मेतत्परतामुखेमधुरतादानेसमुत्साहता ।

मित्रेवंचकतागुरौविनयाताचित्तेऽतिगंभीरता॥
आचारेशुचितागुणेरसिकताशास्त्रेषुविज्ञातृता।
रूपेसुंदरताशिवेभजनतात्वय्यास्तिभोराघव १५

टीका—धर्ममें तत्परता, मुखमें मधुरता, दानमेंउत्साहता मित्रके विषयमें निश्छलता, गुरूसे नम्रता, अंतःकरण में गंभीरता, आचारमें पवितत्रा गुणोंमें रसिकता, शास्त्रों में विशेष ज्ञान, रूपमें सुन्दरता और शिवकी भक्ति, हेराघव ! ये आपही में हैं ॥ १५ ॥

काष्ठंकल्पतरुःसुमेरुरचलश्चिंतामणिः प्रस्थरः सूर्यस्तीव्रकरः शशीक्षयकरःक्षारोहिवारांनिधिः कामोनष्टतनुर्बलिर्दितिसुतोनित्यंपशुः कामगौःनैतांस्तेतुलयामिभोरघुपतेकस्योपमा दीयते ॥ १६ ॥

टीका--कल्पवृक्ष काठ है, सुमेरु अचल है, चिंतामणि पत्थर है, सूर्यकी किरण अत्यंत ऊष्ण है चन्द्रमाकी किरण क्षीण हो जाती है समुद्र खारा है कामकेशरीर नहीं है बली दैत्य है कामधेनु सदा पशुही है इस कारण आप के साथ इनकी तुलना नहीं देसक्ते हेरघुपति ? फिर आपको किसकी उपमा दीजाय ॥१६॥

विद्यामित्रंप्रवासेचभार्यामित्रंगृहेषुच ॥
व्याधिस्थस्यौषधंमित्रंधर्मोमित्रंमृतस्यच।१७।

टीका–प्रवास में विद्या हित करती है, घरमें स्त्री मित्र है, रोगग्रस्थ पुरुषका हित औषधि होती है, और धर्म मरेका उपकार करता है ॥ १७ ॥

विनयं राजपुत्रेभ्यः पंडितेभ्यः सुभाषितम् ॥
अनृतं द्यूतकारेभ्यः स्त्रीभ्यः शिक्षेत कैतवम् ॥ १८ ॥

टीका--सुशीलता राजाके लडकों से, प्रियवचन पंडितोंसे असत्य जुआडियोंसे और छल स्त्रियोंसे सीखना चाहिये ॥ १८ ॥

अनालोक्य व्ययं कर्त्ता अनाथः कलहप्रियः ॥
आतुरः सर्वक्षेत्रेषु नरः शीघ्रं विनश्यति ॥ १९ ॥

टीका--विनाविचारे व्ययकरनेवाला, सहायक के न रहने परभी कलहमें प्रीति रखनेवाला और सब जातिकी स्त्रियोंमें भोग केलिये व्याकुल होनेवाला पुरुष शीघ्रही नष्ट को प्राप्त होता है ॥ १९ ॥

नाहारं चिंतयेत्प्राज्ञो धर्ममेकं हि चिंतयेत् ॥
आहारो हि मनुष्याणां जन्मना सह जायते ॥ २० ॥

टीका–पंडितको आहारकी चिंता नहीं करनी चाहिये एक धर्मको निश्चयसे शोचना चाहिये, इस हेतु कि, आहार मनुष्योंको जन्मके साथही उत्पन्न होता है ॥ २०

धनधान्यप्रयोगेषु विद्यासंग्रहणे तथा ॥
आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत् ॥ २१ ॥

टीका–धनधान्यके व्यवहार करनेमें, वैसेही विद्या के पढने पढानेमें,आहारमें और राजाकी सभामें किसी के साथ विवाद करनेमें जो लज्जाको छोडे रहेगा वह सुखी होगा ॥ २१ ॥

जलबिंदुनिपातेनक्रमशःपूर्यतेघटः ॥
सहेतुःसर्वविद्यानांधर्मस्यचधनस्यच ॥ २२ ॥

टीका–क्रम क्रम से जलके एक एक बूंदके गिरने से घडा भरजाता है. यही सब विद्या धर्म और धनकाभी कारण है ॥ २१ ॥

वयसःपरिणामेऽपियःखलःखलएवसः ॥
संपक्वमपिमाधुर्यंनोपयातींद्रवारुणम् ॥ २३ ॥

टीका–वयक परिणामपरभी जो खल रहता है सो खलही बना रहता है अत्यन्त पकीभी कडुवी लौकी मीठी नहीं होती ॥ २३ ॥

इतिवृद्धचाणक्ये द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

———:×O+:———

## अथ त्रयोदशोऽध्यायः १३

मुहूर्तमपिजीवेच्चनरःशुक्लेनकर्मणा ॥
नकल्पमपिकष्टेनलोकद्वयविरोधिना ॥ १ ॥

टीका–उत्तम कर्मसे मनुष्योंको मुहूर्तभरका जीना

भी श्रेष्ठ है दोनोंलोगोंके विरोधी दुष्टकर्मसे कल्पभर काभी जीना उत्तम नहीं है ॥ १ ॥

गतेशोकोनकर्तव्योभविष्यंनैवचिंतयेत् ॥
वर्तमानेनकालेनप्रवर्तन्तेविचक्षणाः ॥ २ ॥

टीका गईवस्तुका शोक और भावीकी चिंता नहीं करनी चाहिये,कुशल लोग वर्तमान कालके अनुरोध से प्रवृत होते हैं ॥ २ ॥

स्वभावेनहितुष्यंतिदेवाःसत्पुरुषाःपिता ॥
ज्ञातयःस्नानपानाभ्यांवाक्यदानेनपंडिताः॥३॥

टीका–निश्चय हैकि, देवता सत्पुरुष, और पिता ये प्रकृतिसे संतुष्ट होते हैं पर बन्धु स्नान और पानसे और पण्डित प्रियवचनसे संतुष्ट होतेहैं ॥ ३ ॥

आयुःकर्मचवित्तंचविद्यानिधनमेवच ॥
पंचैतानिचसृज्यंतेगर्भस्थस्यैवदेहिनः ॥ ४ ॥

टीका–आयुर्दाय, कर्म, विद्या धन और मरण ये पांच जब जीव गर्भमें रहता है उसीसमय सिरजे जाते हैं ॥ ४ ॥

अहोवतविचित्राणिचरितानिमहात्मनाम् ॥
लक्ष्मींतृणायमन्यन्तेतद्भारेणनमंतिच ॥ ५ ॥

टीका–आश्चर्य है कि, महात्माओंके विचित्र

चरित्र हैं लक्ष्मीको तृणसमान मानते हैं यदि मिल जाती है तो उसके भारसे नम्र होजाते हैं ॥ ५ ॥

यस्यस्नेहोभयंतस्यस्नेहोदुःखस्यभाजनं ॥
स्नेहमूलानिदुःखानितानित्यक्त्वावसेत्सुखम् ६

टीका—जिसको किसीमें प्रीति रहती है उसीको भय होता है स्नेहही दुःखका भाजन है और सब दुःखका कारण स्नेहही है इसकारण उसे छोड़कर सुखी होना उचित है ॥ ६ ॥

अनागतविधाताचप्रत्युत्पन्नमतिस्तथा ॥
द्वावेतौसुखमेधेतेयद्भविष्योविनश्यति ॥ ७ ॥

टीका—आनेवाले दुःखके पहिलेसे उपाय करने वाला और जिसकी बुद्धिमें विपत्ति आजानेपर शीघ्रही उपायभी आजाता है ये दोनों सुखसे बढ़ते हैं और जो शोचता है कि, भाग्यवशसे जो होने-वाला है सो अवश्य होगा वह विनष्ट होजाता है॥७॥

राज्ञिधर्मिणिधर्मिष्ठाःपापेपापाःसमेसमाः ॥
राजानमनुवर्तन्तेयथाराजातथाप्रजाः ॥ ८ ॥

टीका—यदिधर्मात्मा राजा होतो प्रजाभी धर्मिष्ट होती है यदि पापी हो तो पापी होती है सब प्रजा राजाके अनुसार चलती है. जैसा राजा वैसी प्रजाभी होती है ॥ ८ ॥

जीवन्तंमृतन्मन्येदेहिनंधर्मवर्जितम् ॥
मृतोधर्मेणसंयुक्तोदीर्घजीवीनसंशयः ॥ ९ ॥

टीका—धर्मरहित जीतेको मृतकके समान समझता हूं निश्चय है कि, धर्मयुत मराभी पुरुष चिरंजिवीही है॥९॥

धर्मार्थकाममोक्षाणांयस्यकोऽपिनविद्यते ॥
अजागलस्तनस्येवतस्यजन्मनिरर्थकम्॥१०॥

टीका—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन्होंमें से जिसको एकभी नहीं रहता, बकरीके गलके स्थनके समान उसका जन्म निरर्थक है ॥ १० ॥

दह्यमानः सुतीव्रेणनीचाः परयशोऽग्निना ।
अशक्तास्तत्पदंगन्तुंततोनिंदांप्रकुर्वते ॥ ११ ॥

टीका—दुर्जन दूसरेकी कीर्तिरूप दुःसह अग्निसे जलकर उसके पदको नहीं पाते इसलिये उसकी निन्दा करने लगते हैं ॥ ११ ॥

बन्धायविषयासंगोमुक्त्यैनिर्विषयंमनः ॥
मनएवमनुष्याणांकारणंबन्धमोक्षयोः ॥१२॥

टीका—विषयमें आशक्त मन बन्धका हेतु है विषय से रहित मुक्तिका, मनुष्योंके बन्ध और मोक्षका कारण मनही है ॥ १२ ॥

देहाभिमानेगलितेज्ञानेनपरमात्मनः ॥
यत्रयत्रमनोयातितत्रतत्रसमाधयः ॥ १३ ॥

टीका—परमात्माके ज्ञानसे देहके अभिमानके नाश होजाने पर जहां जहां मन जाता है वहां वहां समाधि ही है ॥ १३ ॥

ईप्सितंमनसः सर्वंकस्यसंपद्यतेसुखम् ॥
दैवायत्तंयतःसर्वंतस्मात्सन्तोषमाश्रयेत्॥१४॥

टीका-मनका अभिलाषित सब सुख किसको मिलता है, जिसकारण सब दैवके वश है इससे संतोष पर भरोसा करना उचित है ॥ १४ ॥

यथाधेनुसहस्रेषुवत्सोगच्छतिमातरम् ॥
तथायच्चकृतंकर्मकर्तारमनुगच्छति॥ १५ ॥

टीका—जैसे सहस्रों धेनुके रहते बछरा माताहीके निकट जाता है; वैसेही जो कुछ कर्म कियाजाता सो कर्ताहीको मिलता है ॥ १५ ॥

अनवस्थितकार्यस्यनजनेनवनेसुखम् ॥
जनोदहतिसंसर्गाद्वनंसङ्गविवर्जनात्॥ १६ ॥

टीका- जिसके कार्यकी स्थिरता नहीं रहती वह न जनमें और न वनमें सुख पाता है. जन उसको संसर्ग से जराता है और वन संगके त्यागसे जराताहै ॥ १६ ॥

यथाखात्वाखनित्रेणभूतलेवारिविन्दति ॥
तथागुरुगतांविद्यांशुश्रूषुरधिगच्छति ॥ १७ ॥

टीका—जैसे खननेके साधनसे खनके नर पाताल के जलको पाता है वैसेही गुरुगत विद्याको सेवक शिष्य पाता है ॥ १७ ॥

कर्मायत्तंफलंपुंसांबुद्धिःकर्मानुसारिणी ॥
तथापिसुधियश्चार्याःसुविचार्यैवकुर्वते ॥१८॥

टीका—यद्यपि फल पुरुषके कर्मके आधीन रहता है और बुद्धिभी कर्मके अनुसारही चलतीहै तथापि विवेकी महात्मा लोग विचारहीके काम करते हैं ॥१८॥

सन्तोषस्त्रिषुकर्तव्यःस्वदारेभोजनेधने ॥
त्रिषुचैवनकर्तव्योऽध्ययनेजपदानयोः ॥१९॥

टीका—स्त्री, भोजन और धन इन तीनमें सन्तोष करना उचित है. पढना, तप और दान इन तीनमें संतोष कभी नहीं करना चाहिये ॥ १९ ॥

एकाक्षरप्रदातारंयोगुरुंनाभिवंदते ॥
श्वानयोनिशतंभुक्त्वाचाण्डालेष्वभिजायते २०

टीका—जो एक अक्षरभी देनेवाले गुरुकी वन्दना नहीं करता वह कुत्तेकी सौ योनिको भोगकर चांडालों में जन्मता है ॥ २० ॥

युगांतेप्रचलेन्मेरुःकल्पांतेसप्तसागराः ॥
साधवःप्रतिपन्नार्थान्नचलंतिकदाचन ॥२१॥

टीका–युगके अन्तमें सुमेरु चलायमान होता है और कल्पके अंतमें सातों सागर, परन्तु साधुलोग स्वीकृत अर्थसे कभी नहीं विचलते ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवृद्धचाणक्ये त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

---

## अथ चतुर्दशोऽध्यायः १४

पृथिव्यांत्रीणिरत्नानिजलमन्नंसुभाषितम् ॥
मूढैःपाषाणखंडेषुरत्नसंख्याविधीयते ॥ १ ॥

टीका–पृथ्वीमें जल अन्न और प्रियवचन ये तीनहीं रत्न हैं. मूढोंने पाषाण के टुकडोंमें रत्नकी गिनती की है ॥ १ ॥

आत्मापराधवृक्षस्यफलान्येतानिदेहिनाम् ॥
दारिद्र्यरोगदुःखानिबंधनव्यसनानिच ॥ २ ॥

टीका–जीवोंको अपने अपराधरूप वृक्षके दरिद्रता, रोग, दुःख, बंधन और विपत्ति ये फल होते हैं॥२॥

पुनर्वित्तंपुनर्मित्रंपुनर्भार्यापुनर्मही ॥
एतत्सर्वंपुनर्लभ्यंनशरीरंपुनः पुनः ॥ ३ ॥

टीका-धन, मित्र, स्त्री और पृथ्वी ये फिर मिलते हैं, परन्तु मनुष्यशरीर फिर फिर नहीं मिलता ॥ ३ ॥

बहूनांचैवसत्त्वानांसमवायोरिपुंजयः ॥
वर्षाधाराधरोमेघस्तृणैरपिनिवार्यते ॥ ४ ॥

टीका-निश्चय है कि बहुतजनोंका समुदाय शत्रुको जीत लेता है. तृणसमूहभी वृष्टिकी धाराके धरने वाले मेघका निवारण करता है. ॥ ४ ॥

जलेतैलंखलेगुह्यंपात्रेदानंमनागपि ॥
प्राज्ञेशास्त्रंस्वयंयातिविस्तारंवस्तुशक्तितः॥५॥

टीका-जलमें तेल, दुर्जनमें गुप्तवार्ता, सुपात्रमें दान और बुद्धिमानमें शास्त्र ये थोंडभी हों तो भी वस्तुकी शक्तिसे अपने अपने आपसे विस्तारको प्राप्त होजाते हैं ॥ ५ ॥

धर्माख्यानेश्मशानेचरोगिणांयामतिर्भवेत् ॥
सासर्वदैवतिष्ठेच्चेत्कोनमुच्येतबंधनात् ॥ ६ ॥

टीका-धर्मविषयक कथाके, श्मशानपर और रोगियोंको जो बुद्धि उत्पन्न होती है वह यदि सदा रहती तो कौन बन्धनसे मुक्त न होता ॥ ६ ॥

उत्पन्नपश्चात्तापस्यबुद्धिर्भवतियादृशी ॥
तादृशीयदिपूर्वस्यात्कस्यनस्यान्महोदयः॥७॥

टीका—निंदित कर्म करनेके पश्चात् पछतानेवाले पुरुषको जैसी बुद्धि उत्पन्न होती है वैसी बुद्धि यदि पहिले होती तो किसको बड़ी समृद्धी न होती ॥ ७ ॥

दानेतपसिशौर्येवाविज्ञानेविनयेनये ॥
विस्मयोनहिकर्तव्योवहुरत्नावसुंधरा ॥ ८ ॥

टीका—दानमें, तपमें शूरतामें, विज्ञतामें, सुशीलतामें, और नीतिमें विस्मय नहीं करना चाहिये इस कारण कि पृथ्वीमें बहुत रत्न हैं ॥ ८ ॥

दूरस्थोऽपिनदूरस्थोयोयस्यमनसिस्थितः ॥
योयस्यहृदयेनास्तिसमीपस्थोऽपिदूरतः ॥ ९ ॥

टीका—जो जिसके हृदयमें रहता हैं वह दूरभी हो तौभी वह दूर नहीं जो जिसके मनमें नहीं है वह समीपभी हो तौभी वह दूर है ॥ ९ ॥

यस्माच्चप्रियमिच्छेत्तुतस्यब्रुयात्सदाप्रियम् ॥
व्याधोमृगवधंगंतुंगीतंगायतिसुस्वरम् ॥ १० ॥

टीका—जिससे प्रियकी वांछा हो उससे सदा प्रिय बोलना उचित है. व्याध मृगके वधके निमित्त मधुर स्वरसे गीत गाता है ॥ १० ॥

अत्यासन्नाविनाशायदूरस्थानफलप्रदाः ॥
सेव्यतामध्यभागेनराजावह्निर्गुरुःस्त्रियः ॥ ११ ॥

टीका—अत्यंत निकट रहने पर विनाशके हेतु होते हैं, दूर रहनेसे फल नहीं देते, इसहेतु राजा अग्नि गुरु और स्त्री इनको मध्यम अवस्थासे सेवना चाहिये ॥ ११ ॥

अग्निरापःस्त्रियोमूर्खःसर्पोराजकुलानिच ॥
नित्यंयत्नेनसेव्यानिसद्यःप्राणहराणिषट्॥१२॥

टीका—आग, जल, स्त्री, मूर्ख, सांप और राजाके कुल ये सदा सावधानतासे सेवनेके योग्य हैं ये छः शीघ्र प्राणके हरनेवाले हैं ॥ १२ ॥

सजीवतिगुणायस्ययस्यधर्मःसजीवति ॥
गुणधर्मविहीनस्यजीवितंनिष्प्रयोजनम्॥१३॥

टीका—वही जीता है जिसके गुण हैं, और वही जीता है जिसका धर्म है, गुण और धर्मसे हीन पुरुषका जीना व्यर्थ है ॥ १३ ॥

यदीच्छसिवशीकर्तुंजगदेकेनकर्मणा ॥
पुरापंचदशास्येभ्योगाचरंतींनिवारय॥ १४ ॥

टीका—जो एकही कर्मसे जगतको वश किया चाहते हो तौ पहिले पन्द्रहोंके मुखसे मनको निवारण करो, तात्पर्य यह है कि, आंख, कान, नाक, जीभ, त्वचा ये पांचो ज्ञानेन्द्रिय हैं, मुख, हाथ, पांव, लिंग, गुदा, ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं, रूप शब्द रस गन्ध

स्पर्श ये पांच ज्ञानेन्द्रियोंके विषय हैं इन पन्द्रहोंसे मनको निवारण करना उचित है ॥ १४ ॥

प्रस्तावसदृशंवाक्यंप्रभावसदृशंप्रियम् ॥
आत्मशक्तिसमंकोपंयोजानातिसपण्डितः॥१५

टीका—प्रसंगके योग्य वाक्य, प्रकृतिके सदृश प्रिय और अपने शक्तिके अनुसार कोपको जो जानता है वही बुद्धिमान् है ॥ १५ ॥

एकएवपदार्थस्तुत्रिधाभवतिवीक्षितः ॥
कुणपं कामिनीमांसंयोगिभिः कामिभिः श्वभिः ॥ १६ ॥

टीका—एकही देहरूप वस्तु तीनप्रकारकी देख पडती है योगीलोग उसको अतिनिन्दित मृतक रूपसे, कामीपुरुष कांतारूपसे कुत्ते मांसरूपसे देखते हैं ॥ १६ ॥

सुसिद्धमौषधंधर्मंगृहच्छिद्रंचमैथुनम् ॥
कुभुक्तंकुश्रुतंचैवमतिमान्नप्रकाशयेत् ॥१७॥

टीका—सिद्ध औषध, धर्म अपने घरका दोष, मैथुन कुअन्नका भोजन और निंदित बचन इनका प्रकाश करना बुद्धिमानको उचित नहीं है ॥ १७ ॥

तावन्मौनेननीयन्तेकोकिलैश्चैववासराः ॥
यावत्सर्वजनानन्ददायिनीवाक्प्रवर्तते ॥१८॥

टीका–तबलौं कोकिल मौन साधनसे दिन बिताती है जबलौं सबजनोंको आनन्द देनेवाली वाणीका प्रारंभ नहीं करती है ॥ १८ ॥

धर्मंधनंचधान्यंचगुरोर्वचनमौषधम् ॥
सुगृहीतंचकर्तव्यमन्यथातुनजीवति ।।१९ ॥

टीका–धर्म, धन, धान्य, गुरूका बचन और औषध यदि यह सुगृहीत हों तोइनको भली भांतिसे करना चाहिये जो ऐसा नहीं करता वही नहीं जीता ॥१९॥

त्यजदुर्जनसंसर्गंभजसाधुसमागमम् ॥
कुरुपुण्यमहोरात्रंस्मरनित्यमनित्यतः॥ २० ॥

टीका–खलका संग छोड, साधूकी संगातिका स्वीकार कर, दिनरात पुण्य क्रिया कर और ईश्वरका नित्यस्मरण कर इसकारण कि संसार अनित्यहै ।२०।

इति चतुर्दशोऽध्याय ॥ १४ ॥

---

## अथ पंचदशोऽध्यायः । १५ ।

यस्यचित्तंद्रवीभूतंकृपयासर्वजन्तुषु ॥
तस्यज्ञानेनमोक्षेणकिंजटाभस्मलेपनैः ॥१॥

टीका–जिसका चित्त सब प्राणियोंपर दयासे पिघल जाता है उसको ज्ञान से, मोक्षसे, जटासे और विभूति के लेपनसेक्या है ॥ १ ॥

एकमेवाक्षरंयस्तुगुरुःशिष्यंप्रबोधयेत् ॥
पृथिव्यांनास्तितद्द्रव्यंयद्दत्त्वाचानृणोभवेत्॥२॥

टीका--जो गुरु शिष्यको एकभी अक्षरका उपदेश करता है पृथ्वीमें ऐसा द्रव्य नहीं है जिसको देकर शिष्य उससे उत्तीर्ण होय ॥ २ ॥

खलानांकण्टकानांचद्विविधैवप्रतिक्रिया ॥
उपानन्मुखभंगोवादूरतोवाविसर्जनम् ॥ ३ ॥

टीका—खल और कांटा इनका दोई प्रकारका उपाय है जूतासे मुखका तोडना वा दूरसे त्याग देना ॥ ३ ॥

कुचैलिनंदन्तमलोपधारिणंबह्वाशिनंनिष्ठुरभाषिणांच ॥ सूर्योदयेचास्तमितेशयानंविमुंचति श्रीर्यदिचक्रपाणिः ॥ ४ ॥

टीका—मलिन वस्त्रवालेको, जो दांतोंके मलको दूर नहीं करता उसको, बहुत भोजन करनेवालेको, कटु भाषीको, सूर्यके उदय और अस्तके समयमें सोने वालेको लक्ष्मी छोड़देती है.चाहे वह विष्णु भी हो॥४॥

त्यजंतिमित्राणिधनैर्विहीनंदाराश्चभृत्याश्चसुहृज्जनाश्च ॥ तंचार्थवंतंपुनराश्रयंतेह्यर्थोहिलोके पुरुषस्यबंधुः ॥ ५ ॥

टीका—मित्र, स्त्री, सेवक, और बन्धु ये धनहीन

पुरुषको छोडदेते हैं और वही पुरुष यदि धनी होजाता है तो फिर उसीका आश्रय करते हैं अर्थात् धनही लोकमें बन्धु है ॥ ५ ॥

अन्यायोपार्जितंद्रव्यंदशवर्षाणितिष्ठति ॥
प्राप्तएकादशेवर्षेसमूलंचविनश्यति ॥ ६ ॥

टीका—अनीतिसे अर्जित धन दस वर्षपर्यंत ठहरता है. ग्यारहवें वर्षके प्राप्त होनेपर मूलसहित नष्ट होजाता है ॥ ६ ॥

अयुक्तंस्वामिनोयुक्तंयुक्तंनीचस्यदूषणम् ॥
अमृतंराहवेमृत्युर्विषंशंकरभूषणम् ॥ ७ ॥

टीका—अयोग्यभी वस्तु समर्थको योग्य होती है और योग्यभी दुर्जनको दूषण, अमृतने राहुको मृत्यु दिया, विषभी शंकर को भूषण हुवा ॥ ७ ॥

तद्भोजनंयद्द्विजभुक्तशेषं तत्सौहृदंयत्क्रियतेपरस्मिन् ॥ साप्राज्ञतायानकरोतिपापं दंभंविनायःक्रियतेसधर्मः ॥ ८ ॥

टीका—वही भोजन है जो ब्राह्मणके भोजनसे बचा है वही मित्रता है जो दूसरेमें कीजाती है वही बुद्धिमानी है जो पाप नहीं करती और जो बिना दंभके किया जाता है वही धर्म है ॥ ८ ॥

मणिर्लुंठतिपादाग्रे काचःशिरसिधार्यते ॥
क्रयविक्रयवेलायां काचःकाचोमणिर्मणिः॥९॥

टीका--मणि पांवके आगे लोटती हो, और कांच शिरपरभी रक्खा हो परन्तु क्रयविक्रय के समयमें कांच कांचही रहता है और मणि मणिही है ॥ ९ ॥

अनंतशास्त्रंबहुलाश्चविद्याः अल्पश्चकालोबहु विघ्नताच ॥ यत्सारभूतंतदुपासनीयंहंसोयथा क्षीरमिवांबुमध्यात् ॥ १० ॥

टीका--शास्त्र अनंत है और विद्या बहुत, काल थोडा है, और विघ्न बहुत हैं इसकारण जो सार है उसको लेलेना उचित है, जैसे हंस जलके मध्यसे दूधको लेलेता है ॥ १० ॥

दूरागतंपथिश्रांतंवृथाचगृहमागतम् ॥
अनर्चयित्वायोभुंक्तेसवैचांडालउच्यते ॥११॥

टीका--दूरसे आयेको, पथसे थकेको और निरर्थक गृहपर आयेको बिनापूछे जो खाता है वह चांडालही गिना जाता है ॥ ११ ॥

पठंतिचतुरोवेदान्धर्मशास्त्राण्यनेकशः ॥
आत्मानंनैवजानंतिदर्वीपाकरसंयथा ॥ १२॥

टीका--चारों वेद और अनेक धर्मशास्त्र पढते हैं

परन्तु आत्माको नहीं जानते जैसे करछी पाकके रसको ॥ १२ ॥

धन्याद्विजमयीनाकाविपरीताभवार्णवे ॥
तरंत्यधोगताःसर्वेउपरिस्थाःपतंत्यधः ॥१३॥

टीका—यह ब्राह्मणरूप नाव धन्य है संसाररूप समुद्र में इसकी उलटीही रीति है, उसके नीचे रहनेवाले सब तरते हैं और ऊपर रहनेवाले नीचे गिरते हैं. अर्थात् ब्राह्मणसे जो नम्र रहता है वह तरजाता है और जो नम्र नहीं रहता है वह नरकमें गिरता है।१३।

अयममृतनिधानं नायकोऽप्यौषधीनाम् अमृत मयशरीरःकांतियुक्तोऽपिचन्द्रः ॥ भवति विगतरश्मिर्मंडलंप्राप्यभानोःपरसदननिविष्टः कोलघुत्वंनयाति ॥ १४ ॥

टीका--अमृतका घर औषधियोंका अधिपति जिसका शरीर अमृतमय और शोभायुतभी चंद्रमा सूर्यके मंडलमें जाकर निस्तेज होता है दूसरेके घरमें पैठकर कौन लघुता नहीं पाता ॥ १४ ॥

अलिरयंनलिनीदलमध्यगःकमलिनीमकरंदम दालसः॥विधिवशात्परदेशमुपागताकुटजपुष्प रसंबहुमन्यते ॥ १५ ॥

टीका—यह भौंरा जब कमलिनीके पत्तोंके मध्य था

तब कमलिनीके फूलके रससे आलसी बना रहताथा. अब दैववशसे परदेशमें आकर तोरैयाके फूलको बहुत समुझता है ॥ १५ ॥

पीतः क्रुद्धेनतातश्चरणतलहतोवल्लभोयेनरोषा दाबाल्याद्विप्रवर्य्यैः स्ववदनविवरेधार्यतेवैरि- णीमे ॥ गेहंमेछेदयन्तिप्रतिदिवसमुमाकांत पूजानिमित्तं तस्मात्खिन्नासदाहंद्विजकुलनि लयंनाथयुक्तंत्यजामि ॥ १६ ॥

टीका–जिसने रुष्टहोकर मेरे पिताको पीडाला और जिसने क्रोधकेमारे पांवसे मेरे कन्तको मारा, जो श्रेष्ठ ब्राह्मण बैठे सदालड़कपनसे लेकर मुखविवरमें मेरी वैरिणीको रखते हैं और प्रतिदिन पार्वतीके पतिकी पूजाके निमित्त मेरे गृहको काटते हैं हेनाथ ! इससे खेद पाकर ब्राह्मणोंके घरको सदा छोड़े रहती हूं.

बंधनानिखलुसंतिबहूनिप्रेमरज्जुकृतबन्धन मन्यत् । दारुभेदनिपुणोऽपिषडंघ्रिर्निष्क्रियो भवतिपंकजकोशे ॥ १७ ॥

टीका–बंधनतो बहुत है; परंतु प्रीतिकी रस्सीका बन्धन औरही है. काठके छेदनेमें कुशलभी भौंरा कमलके कोशमें निर्व्यापार होजाता है ॥ १७ ॥

छिन्नोपिचंदनतरुर्नजहातिगंधं वृद्धोऽपिवारण

पतिर्न जहाति लीलाम् ॥ यंत्रार्पितोमधुरतान जहातिचेक्षुः क्षीणोपि नत्यजितशीलगुणान्कुलीनः ॥ १८ ॥

टीका–काटा चन्दनका वृक्ष गन्धको त्याग नहीं देता वृद्धाभी गजपति विलासको नहीं छोड़ता, कोल्हू में पेरीभी ऊख मधुरता नहीं छोड़ती, दरिद्रभी कुलीन सुशीलता आदिगुणोंका त्याग नहीं करता ॥१८॥

उर्व्यांकोऽपिमहीधरोलघुतरोदोर्भ्यांधृतोलीलया। तेनत्वंदिविभूतलेचविदितोगोवर्द्धनोद्धारकः ॥ त्वांत्रैलोक्यधरंवहामिकुचयोरग्रेनतद्गण्यते किंवाकेशवभाषणेनबहुनापुण्यैर्यशोलभ्यते१९

टीका–पृथ्वी पर किसी अत्यंत हलके पर्वतोंको अनायास से बाहुवोंके ऊपर धारण करने से आप स्वर्ग और पृथ्वीतलमें सर्वदा गोवर्द्धनधारी कहलाते हैं, तीनों लोकोंके धरने वाले आपको केवल कुचों के अग्रभागमें धारण करती हूं यह कुछभी नहीं गिनाजाता है हेकेशव ! बहुत कहने से क्या ? पुण्योंसे यश मिलता है ॥ १९ ॥

इति पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

———:+:———

## अथ षोडशोऽध्यायः ॥

नध्यातंपदमीश्वरस्यविधिवत्संसारविच्छित्तये
स्वर्गद्वारकपाटपाटनपटुर्धर्मोऽपिनोपार्जितः॥
नारीपीनपयोधरोरुयुगलं स्वप्नेपिनालिंगितं
मातुःकेवलमेवयौवनवनच्छेदेकुठारावयम् १

टीका--संसार से मुक्त होने के लिये विधिसे ईश्वरके पदका ध्यान मुझसे न हुआ स्वर्गद्वारके कपाटके तोड़नेमें समर्थ धर्म काभी अर्जन न किया और स्त्रीके दोनों पीनस्तन और जंघाओंको आलिंगन स्वप्न में भी न किया मैं माताके युवापन रूप वृक्षके केवल काटने में कुल्हाड़ी उत्पन्न हुआ॥ १ ॥

जल्पंतिसार्द्धमन्येनपश्यंत्यन्यंसविभ्रमाः ॥
हृदयेचिंतयंत्यन्यंनस्त्रीणामेकतोरतिः ॥ २ ॥

टीका--भाषण दूसरेके साथ करती हैं. दूसरे को बिलाससे देखती हैं और हृदयमें दूसरेहीकी चिन्ता करती हैं स्त्रियोंकी प्रीति एकमें नहीं रहती ॥ २ ॥

योमोहान्मन्यतेमूढोरक्तेयंमयिकामिनी ॥
सतस्यावशगोभूत्वानृत्येत्क्रीडाशकुंतवत्॥३॥

टीका--जो मूर्ख अविवेकसे समझता है कि, यह कामिनी मेरे ऊपर प्रेम करती है वह उसके वश होकर खेलके पक्षीके समान नाचा करता है ॥ ३ ॥

कोऽर्थान्प्राप्यनगर्वितोविषयिणः कस्यापदोऽस्तंगताः स्त्रीभिःकस्यनखंडितंभुविमनः कोनामराजप्रियः ॥ कःकालस्यनगोचरत्वमगमत्कोऽर्थीगतोगौरवं कोवादुर्जनदुर्गुणेषुपतितः क्षेमेणयातः पथि ॥ ४ ॥

टीका—धन पाकर गर्वी कौन न हुवा. किस विषयी की विपत्ती नष्ट हुई. पृथ्वीमें किसके मनको स्त्रियों ने खण्डित न किया. राजाको प्रिय कौन हुवा. काल के वश कौन नहीं हुवा. किस याचक ने गुरुता पाई. दुष्टकी दुष्टतामें पड़कर संसार के पंथमें कुशलतासे कौन गया ॥ ४ ॥

ननिर्मिताकेन नदृष्टपूर्वा नश्रूयते हेममयी कुरंगी ॥ तथापितृष्णा रघुनंदनस्य विनाशकाले विपरीतबुद्धिः ॥ ५ ॥

टीका—सोनेकी मृगी न पहिले किसीने रची, न देखी और न किसीको सुन पड़ती है तौभी रघुनंदन की तृष्णा उसपर हुई. विनाशके समय बुद्धि विपरीत होजाती है ॥ ५ ॥

गुणैरुत्तमतांयातिनोच्चैरासनसंस्थिताः ॥ प्रसादशिखरस्थोऽपिकाकःकिंगरुडायते ॥

प्राणी गुणोंसे उत्तमता पाता है ऊंचे आसनपर

बैठकर नहीं. कोठोंके ऊपर के भागमें बैठा कौवा क्या गरुड़ होजाता है ॥ ६ ॥

गुणाःसर्वत्रपूज्यंतेनमहत्योऽपिसंपदः ॥
पूर्णेन्दुःकिंतथावंद्योनिष्कलंकोयथाकृशः॥७॥

टीका—सब स्थानों में गुण पूजे जाते हैं बड़ी संपति नहीं, पूर्णिमाका पूर्णभी चंद्रमा क्या वैसा वंदित होता है जैसा बिना कलंकके द्वितीयाका दुर्बलभी ॥७॥

परस्तुतगुणोयस्तुनिर्गुणोपिगुणीभवेत् ॥
इंद्रोऽपिलघुतांयातिस्वयंप्रख्यापितैर्गुणैः ॥८॥

टीका—जिसके गुणोंको दूसरे लोग वर्णन करते हैं वह निर्गुणभी होतो गुणवान् कहा जाता है. इन्द्रभी यदि अपने गुणों की आप प्रशंसा करै तो उससे लघुता पाता है ॥ ८ ॥

विवेकिनमनुप्राप्ता गुणायांतिमनोज्ञताम् ॥
सुतरांरत्नमाभातिचामीकरनियोजितम्॥९॥

टीका—विवेकीको पाकर गुण सुंदरता पातेहैं जब रत्न सोनेमें जड़ा जाताहै तब अत्यंत सुंदर दीख पड़ताहै॥९॥

गुणैःसर्वज्ञतुल्योऽपि सीदत्येकोनिराश्रयः ॥
अनर्घ्यमपिमाणिक्यं हेमाश्रयमपेक्षते॥१०॥

टीका—गुणोंसे ईश्वरके सदृशभी निरालंब अकेला

पुरुष दुख पाता है अमोलभी माणिक्य सोनाके आलंबकी अर्थात् उस में जडे जानें की अपेक्षा करता है ॥ १० ॥

अतिक्लेशेनयेअर्था धर्मस्यातिक्रमेणतु ॥
शत्रूणांप्रणिपातेन येअर्थामाभवंतुमे ॥ ११ ॥

टीका—अत्यंत पीडासे धर्मके त्यागसे और वैरियों की प्रणतिसे जो धन होते हैं सो मुझको नहीं ॥११॥

किंतयाक्रियतेलक्ष्म्या यावधूरिवकेवला ॥
यातुवेश्येवसामान्या पथिकैरपिभुज्यते॥१२॥

टीका—उस संपत्तिसे लोग क्या कर सक्ते हैं जो वधू के समान असाधारण है जो वेश्याके समान सर्व साधारण हो वह पथिकोंकेभी भोगमें आसक्ती है॥१२॥

धनेषुजीवितव्येषु स्त्रीषुचाहारकर्मसु ॥
अतृप्ताःप्राणिनःसर्वे यातायास्यंतियातिच।१३।

टीका—धनमें जीवन में स्त्रियोंमें और भोजनमें अतृप्त होकर सब प्राणिगये और जायंगे ॥ १३ ॥

क्षीयंतेसर्वदानानि यज्ञहोमबलिक्रियाः ॥
नक्षीयतेपात्रदानमभयंसर्वदेहिनाम् ॥ १४ ॥

टीका—सब दान, यज्ञ, होम, बलि ये सब नष्ट होजातेहैं सत्पात्र को दान और सब जीवोंको अभय दान ये क्षीण नहीं होते ॥ १४ ॥

तृणंलघुतृणात्तूलं तूलादपिचयाचकः ॥
वायुनाकिंननीतोऽसौ मामयंयाचयिष्यति।१५।

टीका–तृण सबसे लघु होता है तृणसे रुई हलकी होती है रुईसेभी याचक तो उसे वायु क्यों नहीं उडा ले जाती वह समझती है कि यह मुझसेभी मांगेगा ॥ १५ ॥

वरंप्राणपरित्यागो मानभंगेनजीवनात् ॥
प्राणत्यागेक्षणंदुःखं मानभंगेदिनेदिने ॥१६॥

टीका–मानभंगपूर्वक जीनेसे प्राणका त्याग श्रेष्ठ है प्राण त्यागके समय क्षणभर दुःख होता है मान के नाश होनेपर दिन दिन ॥ १६ ॥

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वेतुष्यंतिजन्तवः ॥
तस्मात्तदेववक्तव्यं वचनेकिंदरिद्रता ॥ १७ ॥

टीका–मधुर बचनके बोलनेसे सब जीव संतुष्ट होते हैं. इस कारण उसीका बोलना योग्य है बचनमें दरिद्रता क्या ॥ १७ ॥

संसारकूटवृक्षस्य द्वेफलेअमृतोपमे ॥
सुभाषितंचसुस्वादुसंगतिःसुजनेजने ॥ १८ ॥

टीका–संसाररूप कूटवृक्षके दोही फल हैं. रसीला प्रियबचन और सज्जनके साथ संगति ॥ १८ ॥

बहुजन्मसुचाभ्यस्तंदानमध्ययनंतपः ॥
तेनैवाभ्यासयोगेनदेहमीचाभ्यस्यतेपुनः॥१९

टीका—जो जन्म जन्म दान, पढना, तप, इनका अभ्यास कियाजाता है उस अभ्यासके योगसे देहका अभ्यास फिर फिर करता है ॥ १९ ॥

पुस्तकेषुचयाविद्या परहस्तेषुयद्धनम् ॥
उत्पन्नेषुचकार्येषु नसाविद्यानतद्धनम् ॥ २० ॥

टीका—जो विद्या पुस्तकोंहीं में रहती है और दूसरोंके हाथों में जो धन रहता है, काम पड़जानेपर न विद्या है न वह धन है ॥

इतिवृद्धचाणक्ये षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

———:×0+:———

## अथ सप्तदशोऽध्याय प्रारंभः १७

पुस्तकप्रत्ययाधीतं नाधीतंगुरुसन्निधौ ॥
सभामध्येनशोभंते जारगर्भाइवस्त्रियः ॥ १ ॥

टीका—जिनने केवल पुस्तकके प्रतितसे पढा गुरूके निकट न पढा वे सभाके बीच व्यभिचारसे गर्भवाली स्त्रियोंके समान नहीं शोभते ॥ १ ॥

कृतेप्रतिकृतिंकुर्याद्धिंसनेप्रतिहिंसनम् ॥
तत्रदोषोनपततिदुष्टेदुष्टंसमाचरेत् ॥ २ ॥

टीका—उपकार करनेपर प्रत्युपकार करना चाहिये और मारनेपर मारना इसमें अपराध नहीं होता इस कारणकि, दुष्टता करनेपर दुष्टताका आचरण करना उचित होता है ॥ २ ॥

यद्दूरंयद्दूराराध्यंयच्चदूरेव्यवस्थितम् ॥
तत्सर्वंतपसासाध्यंतपोहिदुरतिक्रमम् ॥ ३ ॥

टीका—जो दूरहै जिसकी आराधना नहीं होसक्ती और जो दूर वर्तमान है वे सब तपसे सिद्ध होसक्ते हैं इस कारण सबसे प्रबल तप है ॥ ३ ॥

लोभश्चेदगुणेनकिंपिशुनतायद्यस्तिकिंपातकैः
सत्यंचेत्तपसाचकिंशुचिमनोयद्यस्तितीर्थेनकिम्
सौजन्यंयदिकिंगुणैः सुमहिमायद्य स्तिकिं
मंडनैः सद्विद्यायदिकिंधनैरपयशोयद्यस्तिकिं
मृत्युना ॥ ४ ॥

टीका—यदि लोभ है तो दूसरे दोषसे क्या यदि चुगली है तो और पापोंसे क्या, यदि मन सत्यता है तो तपसे क्या यदि मन स्वच्छ है तो तीर्थसे क्या, यदि सज्जनता है तो दूसरे गुणसे क्या, यदि महिमा है तो भूषणोंसे क्या, यदि अच्छी विद्या है तो धनसे क्या, और यदि अपयश है तो मृत्युसे क्या ॥ ४ ॥

पितारत्नाकरोयस्यलक्ष्मीर्यस्यसहोदरी ॥
संखोभिक्षाटनंकुर्यान्नदत्तमुपतिष्ठते ॥ ५ ॥

टीका–जिसका पिता रत्नोंकी खान समुद्र है, लक्ष्मी जिस्की बहिन, ऐसा शंख भीख मांगता है सच है विना दिया नहीं मिलता ॥ ५ ॥

अशक्तस्तुभवेत्साधुर्ब्रह्मचारीचनिर्धनः ॥
व्याधिष्टोदेवभक्तश्चवृद्धानारीपतिव्रता ॥ ६ ॥

टीका–शक्तिहीन साधु होता है, निर्धन ब्रह्मचारि, रोग्रस्त देवताका भक्त होता है और वृद्ध स्त्री पतिव्रता होती है ॥ ६ ॥

नान्नोदकसमंदानं नतिथिर्द्वादशीसमा ॥
नगायत्र्याःपरोमंत्रो नमातुर्दैवतंपरम् ॥ ७ ॥

टीका–अन्न जलकेसमान कोई दान नहीं है, न द्वादसीके समान तिथि. गायत्रीसे बढ़कर कोई मंत्र नहीं है न मातासे बढ़कर कोई देवता है ॥ ७ ॥

तक्षकस्यविषंदंते मक्षिकायाविषंशिरे: ॥
वृश्चिकस्यविषंपुच्छे सर्वांगेदुर्जनोविषम् ॥८॥

टीका--सांपके दांतमें विष रहता है, मक्खीके सिरमें विष है, विच्छुकी पूंछमें विष है सब अंगोंमें दुर्जन विषही से भरा रहता है ॥ ८ ॥

पत्युराज्ञांविनानारी उपोस्यव्रताचारिणी ॥
आयुष्याहरतेभर्तुःसानारीनरकंव्रजेत् ॥ ९ ॥

टीका—पतिकी आज्ञा बिना उपवास व्रत करनेवाली स्त्री स्वामीकी आयुको हरती है और वह स्त्री आप नरकमें जाती है ॥ ९ ॥

नदानैःशुद्ध्यतेनारी नोपवासशतैरपि ॥
नतीर्थसेवयातद्वद्भर्तुः पादोदकैर्यथा ॥ १० ॥

टीका—न दानसे, न सैंकडों उपवासों से, न तीर्थ के सेवन से स्त्री वैसी शुद्ध होती है, जैसी स्वामी के चरणोदकसे ॥ १० ॥

पादशेषंपीतशेषं संध्याशेषंतथैवच ॥
श्वानमूत्रसमंतोयं पीत्वाचांद्रायणंचरेत् ॥११॥

टीका—पांव धोनेसे जो जल बचता है, और पीनेसे जो जल बचजाता है और सन्ध्या करनेपर जो अवशिष्ट जल है वह कुत्ते के मूत्रके समान है उसको पीकर चांद्रायणका व्रत करना चाहिये ॥११॥

दानेनपाणिर्नतुकंकणेनस्नानेनशुद्धिर्नतुचंदनेन ॥ मानेनतृप्तिर्नतुभोजनेनज्ञानेनमुक्तिर्नतुमंडनेन ॥ १२ ॥

टीका—दान से हाथ शोभता है कंकण से नहीं, स्नान से शरीर शुद्ध होता है चन्दनसे नहीं, सन्मान से तृप्ति होती है भोजन से नहीं, ज्ञान से मुक्ति होती है, छापा तिलकादि भूषणसे नहीं ॥ १२ ॥

नापितस्यगृहेक्षौरं पाषाणेगंधलेपनम् ॥
आत्मरूपंजलेपश्यन्शक्रस्यापिश्रियंहरेत्॥१३

टीका--नाईके घरपर बार बनवाने वाले, पत्थर परसे लेकर चन्दन लेपन करनेवाला, अपने रूपको पानीमें देखनेवाला इन्द्रभी हो तो उसकी लक्ष्मीको हरलेते हैं ॥ १२ ॥

सद्यःप्रज्ञाहरातुंडी सद्यःप्रज्ञाकरीवचा ॥
सद्यःशक्तिहरानारी सद्यःशक्तिकरंपयः॥१४॥

टीका—कुँदरू शीघ्रही बुद्धि हरलेता है और वच झटपट बुद्धि देती है स्त्री तुरंतही शक्ति हरलेती है दूध शीघ्रही बल कर देता है ॥ १४ ॥

यदिरामायदिरमायदितनयोविनयगुणोपेतः ॥
तनयेतनयोत्पत्तिःसुरवरनगरेकिमाधिक्यम्१५

टीका—यदि कांता है, यदि लक्ष्मी वर्तमान है, यदि पुत्र सुशीलता गुणसे युक्त है, और पुत्रके पुत्रकी उत्पत्ति हुई हो, फिर देवलोकमें इससे अधिक क्या है ? ॥ १५ ॥

परोपकारणंयेषांजागर्तिहृदयेसताम् ॥
नश्यंतिविपदस्तेषांसंपदःस्युःपदेपदे ॥ १६ ॥

टीका—जिन सज्जनोंके हृदयमें परोपकार जागरूक

है उनकी विपत्ति नष्ट होजाती है और पदपदमें संपत्ति होती है ॥ १६ ॥

**आहारनिद्राभयमैथुनानि समानिचैतानिनृणा पशूनाम् ॥ ज्ञानंनराणामधिकोविशेषोज्ञानेन हीनाःपशुभिःसमानाः ॥ १७ ॥**

टीका—भोजन निद्रा भय मैथुन ये मनुष्य और पशुओंके समानही हैं मनुष्योंको केवल ज्ञान अधिक विशेष है ज्ञानसे रहित नर पशुके समान है ॥१७॥

**दानार्थिनोमधुकरायदिकर्णतालैर्दूरीकृताःकरिवरेणमदान्धबुद्ध्या ॥ तस्यैवगण्डयुगमण्डनहानिरेषाभृंगाःपुनर्विकचपद्मवनेवसंति॥१८॥**

टीका—यदि मदान्ध गजराजने गजमदके अर्थी भौंरों को मदांधतासे कर्णके तालोंसे दूर किया तो यह उसीके दोनों गण्डस्थलकी शोभाकी हानि भई.भौंरे फिर विकसित कमल बनमें बसते हैं ॥१८॥ तात्पर्य यह है कि, यदि किसी निर्गुण मदांध राजा वा धनीके निकट कोई गुणी जापडे उस समय मदान्धों को गुणीको आदर न करना मानों अपनी लक्ष्मीकी शोभा की हानि करनी है काल निरवधिहै और पृथ्वी अनंत है गुणीका आदर कहीं न कहीं किसी समय होहीगा.

**राजावेश्यायमश्चाग्निस्तस्करोबालयाचकौ ॥ परदुःखंनजानंतिअष्टमोग्रामकंटकः॥ १९ ॥**

टीका--राजा, वेश्या, यम, अग्नी, चोर, बालक, याचक और आठवां ग्रामकंटक अर्थात् ग्रामनिवासियों को पीडा देकर अपना निर्वाह करनेवाला ये दूसरेके दुःख को नहीं जानते हैं ॥ १९ ॥

अधःपश्यसिकिंवाले पतितंतवकिंभुवि ॥
रेरेमूर्खनजानासि गतंतारुण्यमौक्तिकम्॥२०॥

टीका–हेबाला ! तू नीचे क्यों देखती है पृथ्वीपर तेरा क्या गिरपडा है तब स्त्रीने कहा अरे मूर्ख तू नहीं जानता कि, मेरा तरुणता रूप मोती चलागया॥२०॥

व्यालाश्रयापिविफलापिसकंटकापिवक्रापिपंकिलभवापिदुरासदापि॥गन्धेनबन्धुरसिकेतकिसर्वजंतोःएकोगुणःखलुनिहंतिसमस्तदोषान्

टीका–हेकेतकी ! यद्यपि तू सांपों का घर है विफल है तुझमें कांटेभी हैं टेढी है कीचड में तेरी उत्पत्ति है और तू दुःख से मिलनीभी है तथापि एक गंध गुणसे सब प्राणियोंकी बन्धु होरही है निश्चय है कि, एकभी गुण दोषोंका नाश करदेता है ॥ २१ ॥

इतिश्रीवृद्धचाणक्यनीतिदर्पणसप्तदशोऽध्यायः१७

इति श्री चाणक्यनीतिदर्पणःभाषाटीका सहितो समाप्ता ॥

# विक्रयार्थ पुस्तकें ।

| | |
|---|---|
| दुर्गासप्तशती सुन्दर मोटे अक्षरों में खुला पत्र | ॥=) |
| सारस्वत मूल सजिल्द | ।=) |
| श्रीमद्भगवद्गीता पदच्छेद पदार्थ सहित | १॥) |
| सत्यनारायण की कथा भाषा टीका सहित | ।) |
| सत्यनारायण की कथा, दोहा चौपाई में | -॥) |
| महिम्न मोटे अक्षर | -) |
| सन्ध्या यजुर्वेदी | -) |
| शब्द रूपावलि | =) |
| धातु रूपावलि | ≡) |
| सन्ध्या गुटका | -) |
| देवऋषि तर्पण | -) |
| श्री तुलसीदासजी कृत रामायण छपरही है | |
| सर्व पूजा | =)॥ |
| रामस्तव राज | ≡) |
| लक्ष्मी स्तोत्र ( लक्ष्मीजी महाराजको प्रसन्न रखना हो तो इसका पाठ अवश्य कीजिये फिर देखिये कि सदा भंडार भराही रहे | )॥ |
| सूर्य्य पुराण | =) |
| नवग्रह स्तोत्र ( इसके पाठ करनेसे ग्रहव्याधि पलायमान होती है पुस्तक मूल्य भी एक ही आना है फिर विलम्ब क्यों करते हैं लीजिये पाठ करके तत्काल फल देख लीजिये | -) |

## विक्रयार्थ पुस्तकें।

गंगालहरी संस्कृत (कविवर जगन्नाथभट्टकृत गंगा महाराणीको प्रसन्न करनेका एक सहज उपायहै उक्त कवि ने यह स्तुति गाकर यवनी संसर्ग के पातकसे छुटकारा पायाथा तो क्या आपके पापों का नाश होना कुछ दुष्करहै) =)

अर्जुन गीता ।)

संध्या सामाजिक ईश्वर प्रार्थना सहित )॥

गोपाल सहस्र नाम सादा ।)

" " रेशमी पुट्टा ।=)

विष्णु सहस्र नाम सादा ।)

" " रेशमी पुट्टा ।=)

चाणक्यनीति दर्पण भाषा टीका सजिल्द ।-)

श्री भर्तृहरिशतक नीति, शृंगार, वैराग्य, भाषा टीका सहित सम्पूर्ण अति उत्तम बडे अक्षर में छपरहा है शीघ्रही तय्यार होगा॥

---

बाबू दीपचन्द मैनेजर
मुलतानमल प्रिन्टिंग प्रेस
छा० नीमच

# * श्रीभर्तृहरिशतक *
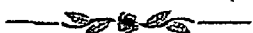
यह श्रीमन् महाराज आर्य कुलशिरोमणि श्री १०८ श्री भर्तृहरिजी का बनाया हुआ ग्रन्थ है जिसमें नीति, शृंगार तथा वैराग्य पर आपने अतिउत्तम रचना की है इस ग्रन्थ को हमने आप लोगों के सुभीते के लिये भाषा टीका छापा है आशा है कि आप लोग अवश्य ऐसे ग्रन्थ को पढकर लाभ उठावेंगे क्योंकि ऐसे ग्रन्थ के देखने से मनुष्य स्वयं ज्ञान को प्राप्त हो दुःख रूपी समुद्र से पार हो सकता है।

पता पुस्तकें मिलने काः—

बाबू दीपचन्द मैनेजर

मुलतानमल प्रिंटिंग प्रेस

छावनी नीमच।